

राजभाषा विशेषांक

चेतना



महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी)-॥, बिहार,
पटना का कार्यालय



चेतना परिवार

बैठे हुए हैं बाएँ से संरक्षक एवं परामर्शी :

श्री सतीश चन्द्र राउत, परामर्शी, श्री अरूण कुमार सिंह, संरक्षक, श्री प्रवीण कुमार तिवारी, परामर्शी ।

खड़े हैं बाएँ से परामर्शी एवं सम्पादक :

श्री एल० पी० श्रीवास्तव, परामर्शी, श्री आर० पी० मिश्र, परामर्शी, डॉ० जितेन्द्र कुमार, सम्पादक, श्री नरेन्द्र कुमार सिंह 'नाहर', संयुक्त सम्पादक ।

मुख्य आवरण-पृष्ठ परिचय

बोध गया से 41 किलोमीटर पर स्थित 'बराबर गुफा' एक महत्वपूर्ण पुरातात्विक स्थल है। ये गुफाएँ ठोस चट्टानों की नक्काशी कर निर्मित की गई हैं। इन चट्टानों पर भगवान बुद्ध के जीवन की विस्तृत चर्चा की गई है।



चेतना

अर्द्धवार्षिक हिन्दी पत्रिका
(दशम अंक)

राजभाषा विशेषांक

महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी)-II, बिहार, पटना
का कार्यालय

वीरचन्द पटेल मार्ग, पटना-800 001



स्वत्वाधिकार : महालेखाकार (ले० एवं ह०) II, बिहार, पटना ।

प्रकाशन : चेतना

प्रकाशक : महालेखाकार (ले० एवं ह०)- II, बिहार, पटना
का कार्यालय, पटना-800 001

अंक : दशम अंक
सितम्बर, 1998

मूल्य : अनवरत हिन्दी सेवा

मुद्रक : मित्रम् प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिशर्स
धरहर कोठी, नयापेला पटना-4

जात-पात की संकीर्णता और ईर्ष्या-द्वेष मिटाने में तथा भाषासी सीमा तोड़कर एक दिल को दूसरे दिल के साथ जोड़ने में जो मदद हिन्दी के प्रचार-प्रसार से मिल सकती है वह किसी दूसरे उद्यम या वस्तु से मिलना संभव नहीं है ।

-- सुभाष चन्द्र बोस



चेतना परिवार

संरक्षक :

श्री अरूण कुमार सिंह
महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी)-II, बिहार, पटना

प्रकाशन परामर्शदातृ समिति :

श्री सतीश चन्द्र राउत
वरिष्ठ उप-महालेखाकार, बिहार, पटना

श्री प्रवीण कुमार तिवारी
उप-महालेखाकार, बिहार, पटना

श्री राजेन्द्र प्रसाद मिश्र
वरिष्ठ लेखा अधिकारी, बिहार, पटना

श्री ललन प्रसाद शीवास्तव
वरिष्ठ लेखा अधिकारी, बिहार, पटना

सम्पादक मण्डल :

सम्पादक : डॉ० जितेन्द्र कुमार
अनुभाग अधिकारी, हिन्दी कक्ष

संयुक्त सम्पादक : श्री नरेन्द्र कुमार सिंह 'नाहर'
वरिष्ठ लेखाकार, हिन्दी कक्ष

अनुक्रमणिका

क्र० सं०	विषय	रचना के प्रकार	रचयिता	पृष्ठ सं०
1.	चेतना परिवार			3
2.	अनुक्रमणिका			4
3.	महालेखाकार का संदेश			5
4.	उपमहालेखाकार (प्रशासन एवं पेन्शन) का संदेश			6
5.	वरिष्ठ उप-महालेखाकार (जी० ई० एवं निधि) का संदेश			6
6.	सम्पादकीय			7
7.	आपके पत्र			8
8.	बिहार का पिछड़ापन: गिरती वित्तीय दशा का प्रतिबिम्ब	लेख	श्री अरुण कुमार सिंह	11
9.	राष्ट्रीय एकता का सूत्र: हिन्दी	निबन्ध	श्री राम प्रताप सिंह 'मधुप'	16
10.	मखना	कहानी	श्री ललन प्रसाद श्रीवास्तव	18
11.	हमारी राष्ट्रभाषा हिन्दी	कविता	श्री नरेन्द्र कुमार सिंह 'नाहर'	22
12.	क्या क्रोध पर काबू पाया जा सकता है	निबन्ध	श्री अजीत कुमार सिन्हा	23
13.	मूँछ	व्यंग्य-लेख	डॉ० जितेन्द्र कुमार	24
14.	परिचय	कविता	श्री ओम प्रकाश	26
15.	भारतीय नारियों की सामाजिक दशा	निबन्ध	श्री उमेश चौधरी	27
16.	राजा की उत्पत्ति	लघुकथा	सुश्री लीना कुमारी	30
17.	अमर कवि : विद्यापति	लेख	श्री महेन्द्र मोहन मिश्र	32
18.	यह ए. जी. कार्यालय हमारा	कविता	श्री राम बाबू राम	34
19.	स्वतंत्र भारत के पचास वर्ष और हिन्दी	निबन्ध	श्री अवधेश कुमार सिन्हा	35
20.	हास्य-व्यंग्य	लतीफा	श्री ओम प्रकाश	37
21.	बिहार की सांस्कृतिक धरोहर: इटखोरी	निबन्ध	श्री सीताराम सिंह	38
22.	राष्ट्र-निर्माण में हिन्दी	निबन्ध	श्री नरेन्द्र कुमार सिंह 'नाहर'	40
23.	मिथिला और भारतीय संस्कृति	लेख	श्री वनवीर सिंह	43
24.	लोहा	कविता	श्री नरेन्द्र कुमार	46
25.	राजभाषा नीति के कार्यान्वयन हेतु वर्ष 1998-99 के वार्षिक कार्यक्रम से उद्घृत			47

पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों से महालेखाकार कार्यालय का सहमत होना आवश्यक नहीं है। ये रचनाकारों के निजी विचार हैं। साथ ही रचना की मौलिकता के लिए रचनाकार स्वयं जिम्मेवार हैं।

—सम्पादक

महालेखाकार (ले० एवं ह०) - II, बिहार, पटना

का संदेश

राष्ट्रपिता बापू ने कहा था कि मातृभाषा का अनादर माँ के अनादर के बराबर है। जो मातृभाषा का अपमान करता है वह स्वदेशभक्त कहलाने लायक नहीं।

हिन्दी हमारी मातृभाषा, राज्यभाषा, राजभाषा और राष्ट्रभाषा है। इसके पीछे युग और इतिहास ही नहीं, भारतीय जनता की विराट् शक्ति भी है। हिन्दी न तो दरबार की संकीर्ण मनोवृत्ति का आश्रय पाकर पनपी है और न लोहे अथवा सोने के इंगित पर आगे बढ़ी है। कठिनाइयों के पर्वत को चीरकर बहने वाले प्रपात की तरह ही इसका अभ्युदय और विकास लोक-जीवन के अन्तस्तल से हुआ है। इसमें युग जीवन का सच्चा दर्द है, उसकी आशा-निराशा के तरल मोती हैं, निरन्तर प्रवाह में गतिशील बने रहने का आग्रह और उत्साह है। लहराते हुए सागर की तरह यह सतत विकास-पथ पर आगे बढ़ती गई। अतः अहिन्दी प्रान्त के भी राष्ट्र-नेताओं ने उन्मुक्त भाव से इसे भावात्मक एकता का एकमात्र राष्ट्रीय-सूत्र समझा।

भारत सरकार की यह सुविचारित नीति है कि संघ की राजभाषा के रूप में हिन्दी तथा राज्यों के सरकारी काम-काज के लिए अन्य भारतीय भाषाओं के प्रयोग में उत्तरोत्तर वृद्धि हो। वस्तुतः इनका विकास और समृद्धि एक दूसरे पर निर्भर है। राजभाषा विभाग हिन्दी को संघ की राजभाषा के रूप में उसकी प्रयोग-वृद्धि के क्षेत्र में कार्यरत है। अतः हमारा भी यह परम कर्तव्य है कि इस पुनीत कार्य में पूर्ण सहयोग करें। इन्हीं उद्देश्यों से अनुप्रेरित होकर हमारे कार्यालय से अर्द्धवार्षिक हिन्दी पत्रिका 'चेतना' का प्रकाशन होता रहा है। इस बार यह 'राजभाषा विशेषांक' के रूप में है।

मुझे यह कहते हुए बेहद खुशी हो रही है कि पत्रिका का दशम अंक हमारे सहृदय एवं सुधी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है जिसे पढ़कर वे सृजनात्मक मेधा का भरपूर आनन्द लेंगे। साथ ही मैं उन समस्त रचयिताओं एवं पत्रिका के सम्पादक-मंडल तथा परामर्शदातृ समिति के सदस्यों को भी साधुवाद देता हूँ जिन्होंने अपने अथक प्रयास से पत्रिका को रूचिकर और ज्ञानवर्धक बनाया है।

अन्त में मेरी यही मंगल कामना है कि कार्यालय में हिन्दी की यह सृजन-चेतना अनवरत अपनी लौ विखेरती रहे !

अ. कु. सिंह

महालेखाकार (ले० एवं ह०)-II, बिहार, पटना

उप-महालेखाकार (प्रशासन एवं पेंशन), बिहार, पटना का संदेश

अत्यन्त प्रसन्नता की बात है कि कार्यालय में हिन्दी के प्रयोग को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से अर्द्धवार्षिक हिन्दी पत्रिका 'चेतना' का दसवाँ अंक शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है। यह अंक 'राजभाषा विशेषांक' के रूप में है।

आशा करता हूँ कि यह पत्रिका हमारे सहृदय एवं सुधी पाठकों को ज्ञानवर्धक एवं रुचिकर लगेगी तथा सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने में भी सहायक सिद्ध होगी।

पत्रिका के रचनाकारों एवं सम्पादक-मंडल को धन्यवाद ज्ञापित करते हुए पत्रिका की दिनानुदिन प्रगति की मंगल कामना करता हूँ।

प्रवीण तिवारी
उप-महालेखाकार (प्रशासन / पेंशन)
बिहार, पटना

वरिष्ठ उप-महालेखाकार (जी० ई० एवं निधि), बिहार, पटना का संदेश

मुझे इस बात का अपार हर्ष है कि इस कार्यालय से अर्द्धवार्षिक हिन्दी पत्रिका 'चेतना' का दसवाँ अंक अविलम्ब प्रकाशित होने जा रहा है।

आशा है, पत्रिका का यह 'राजभाषा विशेषांक' हमारे विज्ञ एवं प्रेमी पाठकों को सुरुचिपूर्ण एवं जीवंत रचनाओं के लिए प्रिय एवं जानकारीप्रद लगेगा।

सशक्त एवं सजीव रचनाओं के लिए समस्त रचनाकारों एवं सम्पादक मंडल को उनके सार्थक प्रयास के लिए हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

पत्रिका के सम्यक् विकास की हार्दिक शुभकामनाएँ!

स.च. राउत

वरिष्ठ उप-महालेखाकार (जी० ई० एवं निधि), बिहार, पटना

सम्पादकीय

हम संग्रह

इस कार्यालय की हिन्दी पत्रिका 'चेतना' के दसवें अंक को सहृदय पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर हमें बड़ी प्रसन्नता हो रही है। पत्रिका की रचनाएँ इस कार्यालय के राजभाषा-उद्यान के हरे-भरे पौधे हैं। इसमें कितनी हरियाली आ सकी है इसका निर्णय पाठकगण ही कर सकते हैं। इस बार यह अंक 'राजभाषा विशेषांक' के रूप में है।

इस पत्रिका ने भारत सरकार की राजभाषा की नीतियों को इस कार्यालय में सदा कार्यान्वित कराने में मदद की है। राजभाषा के वार्षिक कार्यक्रमों को इस कार्यालय में लागू कराने में भी इसने पूरी सहायता की है। कार्यालय के वातावरण में इसने सरसता लाने का भरपूर प्रयास किया है। पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति के लिए हम सतत्प्रयत्नशील हैं।

पत्रिका के संरक्षक, श्री अरुण कुमार सिंह, महालेखाकार (ले० एवं ह०)—II, बिहार, पटना एवं परामर्शदातृ समिति के सदस्यगण श्री सतीश चन्द्र राउत, वरिष्ठ उप-महालेखाकार (निधि एवं जी० ई०), बिहार, पटना, श्री पी० के० तिवारी, उप-महालेखाकार (पेन. एवं प्रशासन) बिहार, पटना, श्री राजेन्द्र प्रसाद मिश्र, वरिष्ठ लेखा अधिकारी, बिहार, पटना, और श्री ललन प्रसाद श्रीवास्तव, वरिष्ठ लेखा अधिकारी, बिहार, पटना—सभी हिन्दी-प्रेमी हैं। इसलिए पत्रिका को उनका अपार स्नेह मिलता आया है, जिसके कारण पत्रिका को प्रगति पाने में सदा सुविधा मिली है। मैं उक्त पाँचों के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ।

हिन्दी कक्ष के श्री नरेन्द्र कुमार सिंह 'नाहर' (पत्रिका के संयुक्त संपादक) को मैं साधुवाद देता हूँ जिन्होंने अपने अथक प्रयास से पत्रिका को जीवन्त बनाया है।

मैं पत्रिका के रचनाकारों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ, जिन्होंने अपनी अच्छी रचनाओं से पत्रिका को समृद्धशालिनी बनाया है। जी० डी० अनुभाग के अनुभाग अधिकारी, श्री अजीत कुमार सिन्हा का शुक्रगुजार हूँ। उन्होंने पत्रिका-प्रकाशन में सदा मदद की है।

अंत में सहृदय पाठकों से अनुरोध है कि वे पत्रिका के प्रति अपने बहुमूल्य सुझाव भेजकर हमें अनुगृहीत करें।

विजय भारत, जय हिन्दी !

राजभाषा समिति के अध्यक्ष श्री अरुण कुमार सिंह, महालेखाकार (ले० एवं ह०), बिहार, पटना

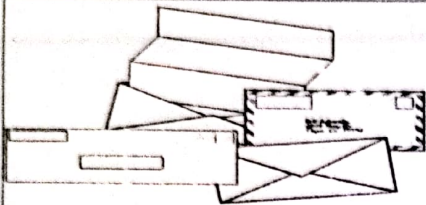
संयुक्त संपादक श्री नरेन्द्र कुमार सिंह 'नाहर', हिन्दी कक्ष, बिहार, पटना

80-5-8

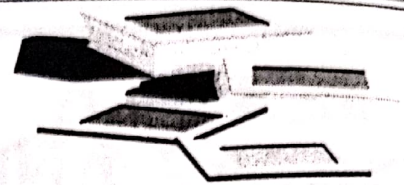
डॉ० जितेन्द्र कुमार

संपादक





आपके पत्र



राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अहर्निश रत अर्द्धवार्षिक हिन्दी पत्रिका 'चेतना' के नवम अंक को प्राप्त कर मन-मयूर नृत्य कर उठा।

पत्रिका यथा नाम तथा गुण की कहावत चरितार्थ करती लक्षित है। हिन्दी के प्रति कार्यालयीय सदस्यों एवं पाठकों को चेतना प्रदान करती हुई निहित रचनाओं के माध्यम से प्रक्षिप्त भावनाओं को उद्दीप्त करने में सर्वथा समर्थ है।

पत्रिका की सभी रचनाएँ मात्र पठनीय ही नहीं, अपितु संग्रहणीय भी हैं तथापि डॉ० जितेन्द्र कुमार की रचना "नारी-भावना" बहुत मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी है। विद्वान लेखक ने नारी-तत्त्व को कुशलतापूर्वक उद्भावित किया है। डॉ० खगेन्द्र ठाकुर की रचना "हिन्दी जब नई चाल में ढली" तथ्यमयी है। ज्योतिष सम्बन्धी ज्ञान प्रदान करनेवाली श्री ललन प्रसाद श्रीवास्तव की रचना भी श्रेष्ठ बन पड़ी है।

सभी रचनाओं की भाषा सर्वबोधगम्य एवं शैली भाव-वहन में सक्षम होती हुई प्रवाहमयी है।

अन्त में मैं सभी रचनाकारों एवं विज्ञ सम्पादक-गण्डल को धन्यवाद देता हुआ पत्रिका की अविरल प्रगति की कामना करता हूँ।

नई दिल्ली

9-7-98

र० कुमार

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी (रा०भा०),

महानिदेशक लेखापरीक्षा का कार्यालय, केन्द्रीय राजस्व, नई दिल्ली।

'चेतना' पत्रिका हिन्दी के प्रचार-प्रसार हेतु पाठकों व कर्मचारियों के मन की चेतना को जागृत करती है। पत्रिका में सुश्री सुमन तिग्गा की कविता अच्छी लगी। डॉ० जितेन्द्र कुमार का लेख "नारी-भावना" सभी व्यक्तियों को नारी के प्रति सम्मान करने के लिए प्रेरित करता है। श्री ललन प्रसाद श्रीवास्तव ने अपने लेख में ज्योतिष के माध्यम से राहु-केतु का कुण्डली में भावों के स्थान में रहने से पाठकों को परिचय कराया है। श्री चन्द्रिका सिंह ने अपनी कविता 'माँ' में माँ शब्द को अलग-अलग शब्दों के माध्यम से उच्च स्थान देने का अच्छा प्रयास किया है जो कि सार्थक है। श्री उमेश चौधरी ने अपने लेख में बच्चों की शिक्षा के प्रति माता-पिता की भूमिका के प्रति कर्मचारियों व पाठकों को जागृत किया है।

सम्पादक महोदय का प्रयास वस्तुतः स्तुत्य है।

जयपुर,

6-7-98

प्रभाकर जोशी

हिन्दी अधिकारी/राजभाषा अनुभाग, भारतीय लेखा तथा लेखा परीक्षा विभाग,

महालेखाकार (लेखा परीक्षा), राजस्थान।

‘चेतना’ पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएँ सारवान, श्रेष्ठ एवं उत्कृष्ट हैं । रचनाएँ न केवल पठनीय हैं अपितु संग्रहणीय भी हैं । श्री पीयूष ओझा की कविता “कैची चली” एक वास्तविकता है तथा डॉ० जितेन्द्र कुमार का लेख विशेष रूप से सराहनीय है ।

सभी रचनाकारों तथा सम्पादक-मंडल को श्रेष्ठ प्रकाशन के लिए हमारी शुभकामनाएँ स्वीकार करें तथा आशा है कि आगामी अंक और भी रोचक होगा ।

पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य की कामना सहित ।

नई दिल्ली

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी (हिन्दी)

17.7.98

प्रधान निदेशक लेखा परीक्षा, आर्थिक एवं सेवा मंत्रालय का कार्यालय, नई दिल्ली ।

हिन्दी पत्रिका ‘चेतना’ के नवम अंक की प्रति प्राप्त हुई । धन्यवाद । पत्रिका अपने नाम के अनुरूप लेखा व लेखापरीक्षा विभाग के कर्मचारियों/अधिकारियों की राजभाषा हिन्दी के प्रति चेतना को सशक्त बनाने में सफल भूमिका का बखूबी से निर्वाहन करती प्रतीत होती है । डॉ० जितेन्द्र कुमार का लेख “नारी-भावना”, श्री पीयूष ओझा का व्यंग्य: “कैची चली” तथा श्री चन्द्रिका सिंह की कविता: “माँ” काफी रुचिकर तथा मोहक बन पड़ी है ।

पत्रिका की चहुँमुखी प्रगति के लिए लेखापरीक्षा, पंजाब परिवार की ढेर शुभकामनाएँ।

यशपाल सहगल

चण्डीगढ़

सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी (हिन्दी कक्ष)

5-8-98

भारतीय लेखा तथा लेखापरीक्षा विभाग, महालेखाकार (लेखापरीक्षा), पंजाब

‘चेतना’ के नवम अंक की एक प्रति प्राप्त हुई । धन्यवाद ।

यों तो पत्रिका में संकलित समस्त रचनाएँ रोचक और ज्ञानवर्धक हैं, किन्तु श्री अरुण कुमार सिंह लिखित “आर्थिक उदारीकरण के कुछ विचारणीय पहलू”, डॉ० जितेन्द्र कुमार की “नारी-भावना”, श्री नरेन्द्र कुमार सिंह ‘नाहर’ की “ईमानदारी” तथा श्री रामबाबू राम की रचना “निम्न आयवर्गीय परिवार की व्यथा और शराब” विशेष रूप से सूचनाप्रद और प्रासंगिक हैं । कविताओं में “कैची चली”, “माँ” और “तेरी याद किया करता हूँ” प्रशंसनीय हैं । पत्रिका के सफल सम्पादन हेतु सम्पूर्ण सम्पादक-मंडल को बहुत-बहुत बधाई । पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति की कामना के साथ ।

कलकत्ता

वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी (हिन्दी),

24.7.98

महालेखाकार (लेखापरीक्षा)-I पश्चिम बंगाल, कलकत्ता ।

‘चेतना’ के नवम अंक की प्रति प्राप्त हुई । धन्यवाद । पत्रिका में समाविष्ट सभी रचनाएँ सुन्दर तथा बोधगम्य हैं । “आर्थिक उदारीकरण के कुछ विचारणीय पहलू” एवं “नारी-भावना” दोनों लेख अभ्यासपूर्ण / विचारप्रेरक और विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं । “कैची चली” व्यंग्य-कविता अच्छी लगी । राहु-केतु के प्रभाव विषयक लेख ज्ञानवर्धक है । सभी रचनाकारों एवं सम्पादक-मंडल को धन्यवाद ।

राजकोट (गुजरात)
20.7.98

वरिष्ठ लेखा अधिकारी, (हिन्दी कक्ष)
महालेखाकार (ले० एवं ह०), गुजरात राजकोट ।

पत्रिका ‘चेतना’ के नवम अंक में समाविष्ट सामग्री ज्ञानवर्धक व सुरुचिपूर्ण है । पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति की कामना सहित ।

शिमला
30.6.98

लेखा अधिकारी (हिन्दी) वरिष्ठ उप-महालेखाकार (ले० एवं ह०)
हिमाचल प्रदेश, शिमला का कार्यालय,

‘चेतना’ पत्रिका के नवम अंक का आवरण-पृष्ठ अत्यन्त रोचक एवं मनमोहक है । पत्रिका में समाहित सभी रचनाएँ आकर्षक, ज्ञानवर्धक, रूचिकर एवं उच्च कोटि की हैं । साथ ही, रचनाएँ भावप्रेरित एवं प्रेरणाप्रद हैं । आशा ही नहीं वरन् पूर्ण विश्वास है कि भविष्य में भी राजभाषा प्रचार-प्रसार में यह पत्रिका अनवरत रूप से हिन्दी-साहित्य प्रेमियों की भावनाओं को लेकर अग्रणी रहेगी एवं हिन्दी भाषा के उत्थान में सहायक बनी रहेगी । पत्रिका के सफल सम्पादन हेतु सम्पादक-मंडल को साधुवाद ।

हार्दिक शुभकामनाएँ ।

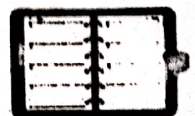
इलाहाबाद
31.7.98

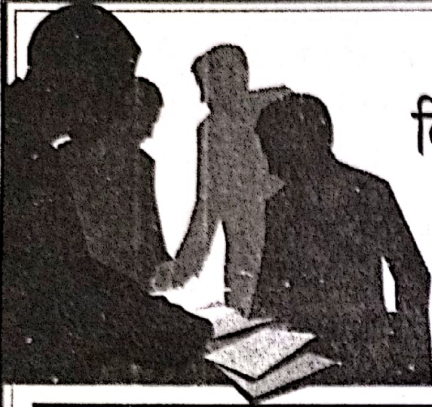
केदार,
सहायक सम्प्रेक्षा अधिकारी, (हिन्दी)
महालेखाकार (लेखापरीक्षा)-I उत्तरप्रदेश, इलाहाबाद का कार्यालय ।

‘चेतना’ के नवम अंक को पाकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई । पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएँ सुबोध और रोचक हैं । पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति के लिए शुभकामना करता हूँ ।

कर्नाटक (बंगलोर)
13.7.98

राम वि. मोहन
वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी, (हिन्दी कक्ष),
महालेखाकार (लेखापरीक्षा)-I, का कार्यालय, कर्नाटक, बंगलोर ।





बिहार का पिछड़ापन: गिरती वित्तीय दशा का प्रतिबिम्ब

—श्री अरुण कुमार सिंह,
महालेखाकार (ले० एवं ह०)-II, बिहार, पटना

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :

जिस राज्य सरकार की गिनती छठे दशक के शुरू में भारतवर्ष के श्रेष्ठ राज्यों में होती थी, वह प्रांत बिहार आज वित्तीय अराजकता एवं कुप्रबंध का पर्यायवाची बन गया है। बिहार सरकार की वित्तीय दशा में सातवें दशक से लगातार गिरावट आयी है। जहाँ एक ओर कर एवं करेत्तर राजस्व की वृद्धि दर में कमी आई है वहीं राजस्व व्यय की वृद्धि दर चिंतनीय है। इससे भी अधिक गम्भीर बात है, पूँजीगत व्यय में लगातार हो रही गिरावट। इसका असर राज्य की योजना के आकार पर पड़ा है और मूलभूत संरचनात्मक परियोजनाओं की प्रगति अत्यंत धीमी हो गयी है। पाँच वर्षों (1991-92 से 1995-96) के दौरान जहाँ बिहार के पूँजीगत व्यय की वृद्धि दर मात्र 1.15 प्रतिशत थी वहीं पं० बंगाल में यह 33.9 थी। पूरे सकल राष्ट्र में यह दर 14.8 प्रतिशत थी। यदि हम योजनागत व्यय की वृद्धि दर की तुलना करें तो बिहार की दयनीय स्थिति का पूरा अंदाज मिल जायेगा। इसी अवधि में बिहार में यह वृद्धि दर 3.87 प्रतिशत रही जबकि पं० बंगाल में यह 29.8 प्रतिशत और भारत में 13.3% थी। इसी अवधि में जहाँ प्रति व्यक्ति गैर-योजनागत व्यय में लगभग 10 प्रतिशत की वृद्धि हुई, वहीं योजनागत व्यय में 6 प्रतिशत का ह्रास हुआ। पं० बंगाल की उपलब्धि क्रमशः 10.4 तथा 27 प्रतिशत तथा देश की क्रमशः

10.7 तथा 10.7 प्रतिशत थी। ये आँकड़े बताते हैं कि बिहार की जनता योजना के लाभ से वंचित रही है और इसका सीधा असर विकास पर पड़ा है। सामाजिक सेवाओं यथा—शिक्षा, स्वास्थ्य, समाज कल्याण आदि पर भी संसाधन की कमी का बुरा असर पड़ा है।

यह बात ठीक है कि वित्तीय दशा की गिरावट का शिकार सिर्फ बिहार ही नहीं बल्कि कमो-बेश सभी राज्य हुए हैं, पर बिहार की स्थिति उन सबसे काफी भिन्न है। इस भिन्नता के दो मुख्य कारण हैं। पहला, बिहार प्राकृतिक संसाधनों—खनिज आदि से परिपूर्ण राज्य है जहाँ औद्योगिक विकास की बड़ी संभावना है। अतः यहाँ आर्थिक विकास करके राजस्व की स्थिति को सुधारने की बड़ी संभावना है। दूसरा, जहाँ अन्य कई विकासोन्मुख राज्यों ने कर एवं करेत्तर राजस्व को सुनियोजित ढंग से बढ़ाकर अपने योजनागत व्ययों को पूरा किया है, वहीं दूसरी ओर बिहार ने अतिरिक्त संसाधन जुटाने के कोई कारगर उपाय नहीं किये। राजस्व की वृद्धि करना तो दूर, यहाँ गैर-योजनागत व्यय में अन्य राज्यों के अनुपात में कहीं ज्यादा वृद्धि हुई है।

व्यय विश्लेषण:

निम्नलिखित तालिका में बिहार की राजस्व-प्राप्ति, राजस्व-व्यय, पूँजीगत व्यय तथा राजस्व बचत/घाटा दिया गया है :



वर्ष—	1975-76	80-81	85-86	91-92	96-97
राजस्व प्राप्ति—	247	882	2409	4672	8408
राजस्व व्यय—	395	662	2174	5186	9027
राजस्व बचत घाटा—	97	219	234 (-)	513 (-)	619
	(+)	(-)			
पूँजीगत व्यय—	90	199	505		503

व्ययों के विश्लेषण से एक गम्भीर नतीजा सामने आता है जो राज्य के आर्थिक भविष्य की निराशाजनक तस्वीर प्रस्तुत करता है। वर्ष 1991-92 में पूँजीगत कुल व्यय का सिर्फ 7% (सभी राज्यों का औसत 10.4 प्रतिशत) था। जो वर्ष 1995-96 में घट कर 4.4 प्रतिशत (सभी राज्यों का 11.2 प्रतिशत) ही रह गया। इसकी तुलना में राजस्व व्यय में इसी अवधि में इतनी वृद्धि हुई कि वर्ष 1995-96 तक वह राज्य के राजस्व प्राप्ति के बराबर (99.9%) हो गयी। इसका अर्थ यह हुआ कि पूँजीगत व्यय के लिये बिहार को पूरी तरह से ऋण पर आश्रित होना पड़ा।

यह सही है कि अन्य राज्यों में भी इस अवधि के दौरान राजस्व व्यय के अनुपात में वृद्धि हुई है पर अन्य राज्यों ने अपने संसाधनों को बढ़ाकर इस व्यय को वहन करने का भरसक प्रयास किया। उदाहरण के लिए प० बंगाल ने इन पाँच वर्षों में अपनी वित्तीय स्थिति मजबूत कर राजस्व व्यय का 61% अपनी ही प्राप्तियों (कर एवं करेत्तर) से पूरा करने की क्षमता प्राप्त कर ली है जबकि वर्ष 1991-92 में वह सिर्फ 56 प्रतिशत ही थी। बिहार का प्रतिशत इन वर्षों में क्रमशः 40 एवं 39.2 है, जो इंगित करता है कि इस राज्य ने अपना संसाधन मजबूत करने में कोई सफलता नहीं पायी है। इस बात की पुष्टि प्रति व्यक्ति कर राजस्व की राशि से भी सिद्ध होती है—प० बंगाल में 1991-92 से 1995-96 की अवधि में प्रति व्यक्ति कर

राजस्व 196 रु० बढ़कर 556 रु० (3.8 गुनी) हो गयी, बिहार में मात्र 79 रु० की वृद्धि होकर 210 रु० (2.6 गुनी) तक पहुँची। राज्य की बढ़ती ऋणग्रस्तता (कुल ऋण और राज्य के सकल उत्पाद के अनुपात से ऋणग्रस्तता मापी जाती है) बिहार को अपनी बढ़ती हुई जरूरतों को पूरा करने के लिए केन्द्रीय सरकार पर अपनी निर्भरता बढ़ा देनी पड़ी। केन्द्र सरकार से ऋण में इन पाँच वर्षों के दौरान 2371 करोड़ का इजाफा हुआ और वह 8772 करोड़ रु० तक पहुँच गया। आंतरिक ऋण में भी 1483 रु० की बढ़ोत्तरी हुई जो वर्ष 1995-96 तक 3509 करोड़ तक पहुँच गया। इस सब का राज्य की वित्तीय स्थिति पर काफी बुरा असर हुआ। लोक ऋण (केन्द्रीय सरकार एवं आंतरिक ऋण का योग) वर्ष 1996-97 तक बढ़कर 13756 रु० हो गया। इसके कारण ब्याज का बोझ 840 करोड़ रु० बढ़कर वर्ष 1995-96 में 1667.5 करोड़ हो गया जो राजस्व व्यय का 20 प्रतिशत था। राज्य की कुल ऋणग्रस्तता में इस दौरान 47 प्रतिशत की वृद्धि हुई (कुल ऋण और राज्य के सकल उत्पाद के अनुपात से ऋणग्रस्तता मापी जाती है)।

योजनागत व्यय:

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) में 13,000 करोड़ रुपये लागत के विरुद्ध सिर्फ 5500 करोड़ रु० यानी 42.3 प्रतिशत ही खर्च हो सका। इसी योजना में पूर्वी क्षेत्र के अन्य राज्यों यानी उड़िसा एवं प० बंगाल ने क्रमशः 53.8 एवं 84.5 प्रतिशत खर्च कर अधिक क्षमता का प्रदर्शन किया है। भारत के सभी राज्यों का औसत 79.9 प्रतिशत बिहार का लगभग दुगुना है। तीसरी पंचवर्षीय योजना में इसी राज्य ने 337 करोड़ रु० लागत के विरुद्ध 331 करोड़ रु० (98 प्रतिशत उपलब्धि) व्यय कर श्रेष्ठ योग्यता दिखायी थी। व्य

करने की क्षमता में हास के कारण सिंचाई, बिजली तथा अन्य मूलभूत सेवाओं को बढ़ाने और बेहतर बनाने में बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा। इसका असर शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं पर भी पड़ा है जिन पर योजनागत खर्च में कमी के कारण सेवा सुधार एवं बिस्तार करने में कठिनाई हुई है। इस तरह बिहार विकास की दौड़ में अन्य राज्यों से काफी पिछड़ गया।

यदि हम प्रति व्यक्ति योजना व्यय की तुलना करें तो पायेंगे कि तृतीय योजना से आठवीं योजना में मात्र 69.5 प्रतिशत वृद्धि हुई है जो वास्तविकता में एक बड़ा हास है क्योंकि इस दौरान रुपये के मूल्य में कई गुनी गिरावट हुई।

अविकसित मूलभूत सुविधायें :

मूलभूत सुविधाओं की कमी के कारण बिहार में शहरीकरण उतनी तेजी से नहीं हुआ जितनी देश के कई अन्य राज्यों में। 1981 से 1991 के बीच शहरी आबादी में बढ़ोतरी सिर्फ 30 प्रतिशत हुई जबकि सभी राज्यों का औसत 36.5 प्रतिशत था। उड़ीसा में यह वृद्धि 36 प्रतिशत थी। प्रति व्यक्ति बिजली की खपत वर्ष 1992-93 में बिहार में मात्र 112 कि. वा. घंटे थी जबकि पूरे देश में यह 281 कि. वा. घंटे यानी ढाई गुनी थी। वर्ष 1994-95 में बिजली की कमी बिहार में 33 प्रतिशत थी जबकि पूरे देश में यह सिर्फ 7 प्रतिशत थी। उसी वर्ष में उड़ीसा में यह कमी राष्ट्र के बराबर थी और प० बंगाल में उससे एक प्रतिशत कम यानी 6 प्रतिशत ही थी। मार्च 1997 तक बिहार के 60 प्रतिशत गाँवों का विद्युतीकरण हुआ था जबकि पूरे देश का प्रतिशत 86 था। कुछ राज्यों जैसे कर्नाटक, कर्ल, गुजरात एवं हरियाणा ने कई वर्ष पहले ही शत-प्रतिशत विद्युतीकरण का लक्ष्य हासिल कर लिया था। उड़ीसा एवं प० बंगाल ने भी क्रमशः 70 एवं 77 प्रतिशतता पा

ली थी। बिहार राज्य विद्युत पर्यद द्वारा ताप बिजली घरों के रख-रखाव में कुप्रबंधन तथा निरर्थक व्यय पर भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक ने अपने प्रतिवेदनों में बराबर टीका-टिप्पणी की है।

जो चिंतनीय स्थिति बिजली के क्षेत्र में है करीब-करीब वैसी दशा सड़कों के विकास में भी है। बिहार में मार्च, 1997 तक 39 हजार कि. मी. सड़कें बनीं जिसका केवल 42.5 प्रतिशत ही ग्रामीण सड़कें थीं। उड़ीसा में इसी समय तक 2 लाख से अधिक लम्बाई की सड़कें बन चुकी थीं जिसका 82 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र में थी। प० बंगाल में 58 प्रतिशत ग्रामीण सड़कें थी।

सामाजिक सेवाओं का गिरता स्तर :

शिक्षा एवं स्वास्थ्य के क्षेत्र में बिहार अन्य राज्यों से बहुत पिछड़ा है। 1991 की जनगणना के अनुसार बिहार की सिर्फ 38.5 प्रतिशत आबादी साक्षर थी जबकि पूरे भारत का यह प्रतिशत 52 था। स्त्रियों की साक्षरता का प्रतिशत और भी कम 22.9 था जबकि पूरे भारत का प्रतिशत 39.3 था। उड़ीसा और मध्य प्रदेश, जो साठवीं दशक में बिहार से पिछड़े थे, अब काफी आगे निकल गये हैं। यहाँ साक्षरता क्रमशः 44 तथा 49 प्रतिशत थी जबकि स्त्रियों में क्रमशः 28.8 एवं 34.7 प्रतिशत साक्षर थी। 1989-90 से 1996-97 के सात वर्ष की अवधि में जहाँ बिहार में सिर्फ 400 नये प्राथमिक विद्यालय खुले वहीं उड़ीसा एवं मध्य प्रदेश में क्रमशः 2300 एवं 10,900 खुले। इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि बिहार सरकार ने प्राथमिक शिक्षा के विकास पर समुचित जोर नहीं दिया। यहीं पिछड़ापन स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी देखने को मिलता है। इन्हीं सात वर्षों में बिहार में सिर्फ 81 नये अस्पताल खुले जबकि 494 निजी डिस्पेंसरी खुले। इसके बावजूद प्रति बंड

जनसंख्या 2960 थी जो वर्ष 1996-97 में अन्य किसी भी राज्य से अधिक थी (उड़ीसा 2508 एवं उत्तर प्रदेश 2035)। ग्रामीण क्षेत्र में स्वास्थ्य सेवा बिल्कुल लचर हो गयी है क्योंकि प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों में चिकित्सकों की अनुपलब्धता, दवा की कमी, स्वास्थ्य सेवकों की उदासीनता आदि समस्याओं ने इनके सेवा स्तर पर काफी बुरा असर डाला है। स्वास्थ्य विभाग में फैली अराजकता के बारे में उच्च न्यायालय बराबर टिप्पणी करता है। भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक ने भी स्वास्थ्य क्षेत्र में फैले कुप्रबंधन की ओर बराबर सरकार का ध्यान दिलाया है। यह एक विडम्बना ही है कि बिहार की गरीब जनता स्वास्थ्य सेवा के लिए निजी क्षेत्र पर ही लगभग पूरी तरह निर्भर है। वर्ष 1996-97 में बिहार में आन्ध्र प्रदेश के बाद निजी डिसपेंसरी की संख्या सबसे अधिक 2488 थी।

पिछले दो वर्षों में सुधार के कुछ लक्षण :

वर्ष 1995-96 एवं 1996-97 में राजस्व में पिछले वर्ष की तुलना में क्रमशः 17 एवं 14 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि यह वृद्धि वर्ष 1994-95 में 1 प्रतिशत मात्र थी। इन्हीं दो वर्षों में कर राजस्व में क्रमशः 4 और 3 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि करेतर राजस्व में क्रमशः 7 एवं 13 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इन्हीं दो वर्षों में पूँजीगत व्यय में क्रमशः 20 एवं 32 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि वर्ष 1994-95 में इसमें दो प्रतिशत की कमी आई थी। पूँजीगत व्यय की कुल व्यय के साथ प्रतिशतता में भी वृद्धि हुई है। वर्ष 1994-95 में यह 4 प्रतिशत थी जो वर्ष 1996-97 में बढ़कर 5.15 हो गयी।

वित्तीय संकट से निकलने के लिए कुछ सुझाव :

सबसे महत्वपूर्ण कदम होगा प्राप्तियों की वसूली में और चुस्ती लाना। वर्ष 1995-96 में राज्य की प्रति

व्यक्ति कर-प्राप्ति मात्र 210 रु० है जो सभी राज्यों के औसत 697 रु० के एक तिहाई से भी कम है। प० बंगाल एवं उड़ीसा में यह राशि क्रमशः 556 रु० एवं 331 रु० है। इससे यह स्पष्ट होता है कि बिहार में बिक्री कर, उत्पाद कर आदि की वसूली को बढ़ाने की काफी गुंजाइश है। इसके अलावा यह भी करें तथा करेतर प्राप्तियों यानी खनिजों पर रॉयल्टी आदि को भी चुस्ती से वसूलने की आवश्यकता है।

दूसरा महत्वपूर्ण कदम होगा व्ययों के फलोत्पादकता को बढ़ाना। इसके लिए जरूरी होगा कि व्यय करने की क्षमता बढ़ाई जाय, साथ ही यह भी ध्यान में रहे कि खर्च फलदायी हो रहा है। विभागाध्यक्ष एवं नियंत्री अधिकारी को व्यय की प्रगति पर बराबर निगरानी रखनी होगी। इसे कारगर बनाने के लिए जरूरी है कि निकासी एवं व्यय अधिकारी हर महीने नियमानुसार व्यय का लेखा-जोखा नियंत्री अधिकारी को भेजे। नियंत्री अधिकारी एवं विभागाध्यक्ष की जिम्मेदारी है कि वह यह सुनिश्चित करें कि व्यय सम्बन्धित लेखा शीर्ष के अंतर्गत दिये बजट अनुदान तक ही सीमित है तथा उस राशि का समुचित उपयोग हुआ है। इसके लिए आवश्यक है कि योजनागत कार्यक्रमों की मंजूरी समय से ले ली जाय ताकि उसके अभाव में उन पर खर्च रोके न रखना पड़े। बिहार में यह अक्सर देखा गया है कि इस अनुमोदन की प्रक्रिया में 8 से 10 महीने लग जाते हैं और समयाभाव में विभाग उपलब्ध राशि खर्च नहीं कर पाती है और उसे या तो वर्ष के अंत में उसे वापस कर देती है या उतना बचत दिखाती है।

कार्य की गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए जरूरी है कि नियंत्री अधिकारी तथा विभागाध्यक्ष समय-समय पर स्वयं क्षेत्र में जाकर स्थिति का जायजा लें। बिहार में यह देखा गया है कि उनके पर्यवेक्षण के

अभाव में नीचे के अधिकारी काम में उतना उत्साह नहीं दिखाते, परिणामतः उसमें संतोषजनक प्रगति नहीं हो पाती और वह अधूरा रह जाता है ।

राज्य सरकार की कंपनियों में काफी पूँजी निवेश के बावजूद उस पर प्रतिफल शून्य है । बिहार जैसे गरीब प्रदेश में जहाँ मूलभूत सुविधाओं एवं सामाजिक सेवाओं के विस्तार एवं सुधार के लिये धन की इतनी जरूरत है, वहाँ इन सफेद हाथियों को पालने की क्या आवश्यकता है ? कई राज्यों ने अपनी कंपनियों के निजीकरण के लिये सफल पहल की है और ऐसा करके राजस्व घाटा कम करने के लिए अच्छा-खासा धनार्जन भी किया है । क्या बिहार उन राज्यों से कुछ नहीं सीख सकता ?

बिहार में विश्व बैंक तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों से विकास की कई परियोजनाओं के लिए काफी धन मिल रहा है पर इस धन का समुचित उपयोग नहीं हो पाता है । चाहे हम बौद्ध तीर्थ स्थानों को अच्छी सड़कों से जोड़ने हेतु जापान सरकार पोषित परियोजना की बात करें या विश्व बैंक पोषित बिहार पठारी विकास परियोजना (बी. पी. डी. पी.) की, हर जगह कुप्रबंधन, भ्रष्टाचार, धन की बर्बादी एवं विभागों की उदासीनता एवं निष्क्रियता का उदाहरण पायेंगे । यदि बिहार से बाहर आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा या गुजरात में इसी तरह की परियोजना की प्रगति पर नजर डालें तब उनकी उपलब्धि पर हम अचंभे में पड़ जायेंगे । इस विषमता का मुख्य कारण है सरकारी तंत्र के रवैये में

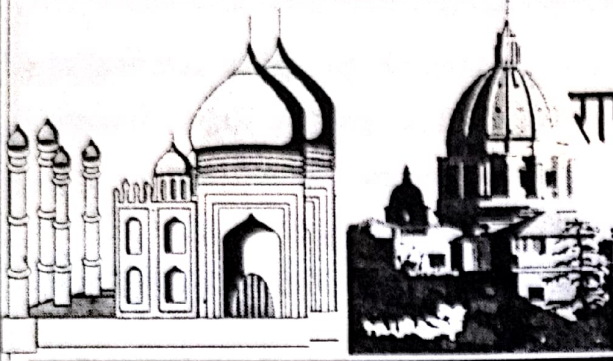
भारी अंतर । यदि बिहार की नौकरशाही में अन्य विकसित राज्यों की तरह चुस्ती आ जाय और वे अपनी जिम्मेदारी का अहसास करने लगें तो सभी परियोजना को समय पर पूरा कर पाना संभव हो जायेगा ।

नौकरशाही को ज्यादा जिम्मेदार बनाने के लिए तीन बातों की आवश्यकता है । पहला, उनकी जरूरी सुविधाओं यानी आवास, यातायात की सुविधा, बच्चों के लिये समुचित पढ़ाई-लिखाई की व्यवस्था को पूरा करना ताकि वे चिंतामुक्त हो पूरी लगन से अपना काम कर सकें । दूसरा, उनके पदस्थापन और स्थानांतरण की प्रक्रिया को राजनैतिक दबाव से मुक्त करना । तीसरा, उनके कार्यकलाप पर समय-समय पर रिपोर्टें, औचक निरीक्षणों एवं बैठकों के माध्यम से निगरानी रखना । यदि वे समझ जायेंगे कि उनके उच्चाधिकारी उन पर बराबर नजर रखे हुये हैं और उनके काम-काज का जायजा ले रहे हैं तो उन्हें कार्य के प्रति उदासीनता की भावना त्यागनी होगी और उसमें प्रगति दिखाने के लिये प्रयत्न करना पड़ेगा ।

अंत में मैं यहीं कहना चाहता हूँ कि ऐसा नहीं है कि बिहार में सारी व्यवस्था टूट गयी है और जीवन में हर तरफ अराजकता एवं अव्यवस्था का आलम है । यह जो निराशा का अंधकार हम इस प्रांत में फैलता देख रहे हैं वह वित्तीय एवं प्रशासनिक कुप्रबंधन का नतीजा है । इस तिमिर को दूर करने के लिए प्रशासन की जिम्मेवारी को और मजबूती से लागू करना होगा तथा वित्तीय प्रबंधन को सुधारना होगा ।

भारत की अखण्डता और व्यक्तित्व रखने के लिए हिन्दी का प्रचार अत्यंत आवश्यक है ।

-महाकवि शंकर कुरूप



राष्ट्रीय एकता का सूत्र: हिन्दी

—श्री राम प्रताप सिंह 'मधुप',
वरिष्ठ लेखाकार

हिन्दी एक सहज, सशक्त एवं प्राणमयी भाषा है। इसकी समृद्ध परम्परा और प्रवहमान सामाजिकता पूरे देश में फैली हुई है। यह राष्ट्रीय सम्पर्क एवं एकता की भाषा है। जन, भू-भाग और जन की संस्कृति से राष्ट्र निर्मित होता है। एक विशेष भौगोलिक खण्ड में फैले हुए लोक-जीवन की अपनी एक सामान्य संस्कृति होती है, अपना भावात्मक एकीकरण होता है। एक सामान्य इतिहास की पृष्ठभूमि में पनपता हुआ यह लोक-जीवन सामान्य आशा-आकांक्षा से दोलित रहता है, पवित्र राष्ट्रीय वृत्ति में बँधा हुआ सुख-दुख के फूल-काँटे चुनता रहता है। लोक-जीवन के इस लहराते सागर की वेदना और संवेदना एक-सी होती है जिसे एकसूत्रता प्रदान करती है उस राष्ट्र की भाषा जो किसी भी देश की एक अनिवार्य आवश्यकता है।

राष्ट्रभाषा राष्ट्र की वैचारिक जागृति का प्रबुद्ध माध्यम है। राष्ट्रभाषा के ही सहारे संघर्ष की साधना आगे बढ़ती है, राष्ट्र की समृद्धि के स्वप्नों को वास्तविकता में गूँथा जाता है। अंग्रेजों की गुलामी के अवसर पर हमने जबतक भाषा की एकसूत्रता को सँवारा नहीं तबतक हमारे संघर्ष में व्यापकता की लहर नहीं आने पाई। अन्तर्प्रातीन्य संगठन की भाषा बनकर हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा बनी। स्वतंत्र होने पर संविधान के द्वारा इसे राष्ट्रभाषा के रूप में हमने स्वीकार कर लिया।

आज हिन्दी का प्रयोग साहित्य, पत्रकारिता, स्कूल कॉलेज, प्रशासन, संसद और विधानमंडलों में प्रतिदिन किया जा रहा है। यही कारण है कि भारतीय संघ की राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी आज समस्त

देश की भाषा है। हिन्दी केवल राष्ट्र ही की भाषा क्यों, यह तो एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा भी बन चुकी है। अब तक के हुए विश्व हिन्दी सम्मेलनों से यह बात बिलकुल स्पष्ट हो चुकी है कि हिन्दी मानव के शोषण के विरुद्ध प्रभावशाली अभियान का माध्यम बन सकती है और समस्त मानव जाति को मानवता की सेवा का संदेश दे सकती है। वस्तुतः हिन्दी हमारी राष्ट्रीय एकता का ही सूत्र नहीं, अपितु विश्व भाषा के रूप में सजीवता और संघर्ष को साथ लेकर नई परिस्थितियों, अराजकता एवं किल्लोल को भी प्रतिबिम्बित कर रही है।

हिन्दी भारत की सामान्य जनता की भाषा है। देश की एकता की सम्पर्क भाषा है यह और यह है साधु-सन्तों की भाषा और भारत की केन्द्रीय शक्ति। ऐसी विकसित भाषा का क्षेत्र कभी सीमित नहीं हो सकता। यही कारण है कि आज हिन्दी भाषा को संसार की भाषाओं में तीसरा स्थान प्राप्त है। अपने देश के अतिरिक्त बर्मा, लंका, मरिशस, फीजी, मलाया, दक्षिण और पूर्वी अफ्रीका में भी हिन्दी बोलनेवालों की संख्या काफी है।

हिन्दी हमारे देश में युग-युग से विचार-विनिमय का सशक्त और जीवंत माध्यम रही है। यह केवल उत्तरी भारत की भाषा नहीं, अपितु दक्षिण भारत के प्राचीन आचार्यों—बल्लभाचार्य, विट्ठल, रामानुज, रामानन्द इत्यादि ने भी इसी भाषा के माध्यम से अपने सिद्धान्तों एवं मतों का प्रचार-प्रसार किया था। आधुनिक युग में भी रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द सरस्वती, श्री अरविन्द और महात्मा गाँधी जैसे युग-द्रष्टा एवं निर्माताओं से हिन्दी एवं हिन्दी के साहित्यकार सदा

प्रभावित होते रहे, क्योंकि उन्होंने हिन्दी को ही अपने सिद्धांतों एवं मतों के प्रचार-प्रसार का माध्यम बनाया। हिन्दी वस्तुतः भारत के चिन्तन और दर्शन का मूल स्रोत है। इसी के द्वारा भारत की आत्मा को पहचाना जा सकता है।

हिन्दी की एक लम्बी परम्परा रही है। इसका भंडार विपुल साहित्य से परिपूर्ण है। हिन्दी के इसी राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व को ध्यान में रखते हुए तथा उसकी सुदीर्घ परम्परा के प्रगतिशील मापदण्डों एवं चरण चिहनों को इतिहास की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि को ध्यान में रखते हुए यह निश्चित किया गया कि हिन्दा के विकास के आन्दोलन को तीव्रतर बनाया जाय। भारत सरकार का राजभाषा विभाग इस दिशा में सतत प्रयत्नशील है और बहुत हद तक उसे सफलता भी मिली है। लेकिन, साहित्य, विज्ञान एवं तकनीक के क्षेत्र में हिन्दी पर दूसरी प्रभुत्वशाली भाषाओं के दबदबे का सामना करने के लिए हमें हिन्दी में ऐसे सृजनात्मक लेख एवं पारिभाषिक शब्दावली को प्रोत्साहित करना चाहिए जिसमें आधुनिक जीवन की भावनाओं, संघर्षों एवं उतार-चढ़ाव के प्रतिबिम्ब के साथ-साथ सहज शब्दावली का निर्माण हो जिससे हिन्दी में सरलता से पढ़ाई की जा सके। दूसरे शब्दों में, हिन्दी सहिष्णुता की भाषा बने, एक खुली जुबान जिसमें खेतों की मिट्टी की खुशबू के साथ-साथ परमाणु युग की आवश्यकताओं और अनुभवों के अनुरूप नई तरह के जीवन की प्यासी पीढ़ी से भी प्रत्यक्षतः सम्पर्क जोड़ा जा सके।

यह बात तय है कि जब तक हम दूसरी भाषाओं

को अपने साथ लेकर नहीं चलेंगे, अन्य भाषाओं के प्रेम और सद्भाव को प्राप्त नहीं करेंगे, तमाम भाषाओं के विकास की आन्तरिक इच्छा से आप्लावित नहीं होंगे तबतक हिन्दी का पूर्ण विकास सम्भव नहीं, क्योंकि सबके विकास में ही हिन्दी का विकास निहित है। इसलिए हम चाहते हैं कि भारत से प्रकाशित होनेवाली श्रेष्ठ हिन्दी पत्रिकाओं का अपने देश के अतिरिक्त बाहर के विभिन्न देशों में बसे भारतवासियों में भी प्रचार-प्रसार हो, सभी तरह की अच्छी पत्रिकाएँ भारत के अधिक-से-अधिक लोगों द्वारा पढ़ी जायें। इससे विभिन्न देशों में हिन्दी के समकालीन, स्तरीय लेखन की जानकारी देने में मदद मिलेगी। इससे भारत के बाहर के देशों में भी हिन्दी लेखन और पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन को प्रोत्साहन मिलेगा तथा वहाँ हिन्दी का सम्यक् विकास सम्भव हो सकेगा।

अन्त में हम कहना चाहेंगे कि निस्सन्देह हिन्दी एक सहज-सरल, सजीव एवं सशक्त भाषा है। वह अपनी आन्तरिक शक्ति के सम्यक् विकास हेतु बाहरी प्रभावों एवं विकट परिस्थितियों से शक्ति-संचय करती हुई अहर्निश विकासशील रही है। उदारतापूर्वक बाहरी शब्दों को ग्रहण करने की स्वच्छंद प्रकृति के कारण आज हिन्दी सिर्फ राष्ट्रीय सम्पर्क का सूत्र नहीं बल्कि वह दिन भी अब ज्यादा दूर नहीं जब वह अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क का सोपान बन जायेगी। भारत सरकार प्रयत्नशील है कि 'संयुक्त राष्ट्र संघ' में हिन्दी को यथोचित स्थान प्राप्त हो सके। हम आशान्वित हैं कि हिन्दी एक-न-एक दिन अन्तर्राष्ट्रीय जगत में भी अपना एक सुनिश्चित स्थान अवश्य बना लेगी।

दुर्जन : परिहर्तव्यो विद्ययाऽलङ्कृतोऽपि सन्।

मणिना भूषितः सर्पः किमसौ न भयंकरः॥

अर्थात्

विद्या से सुशोभित होने पर भी दुष्ट व्यक्ति को त्याग देना चाहिए। मणि से सुशोभित सर्प क्या भयंकर नहीं होता।

—भर्तृहरिः (नीतशतकं)

मखना

—श्री ललन प्रसाद श्रीवास्तव,
वरिष्ठ लेखा अधिकारी

आज एकाएक जब मखना की पत्नी सुखिया को फूटपाथ पर प्रत्येक आने-जाने वालों से हाथ फैला-फैला कर दस पैसे-बीस पैसे की भीख माँगते देखा तो मेरे स्मृति-पटल पर सहसा पुरानी यादें एक चल-चित्र की भाँति स्पष्ट दीखने लगीं ।

मखना अपने माँ-बाप की एकलौती संतान था जिसे उसकी माँ सुरसतिया ने भगवान शंकर के मंदिर में माथा टेक-टेक कर अपने वैवाहिक जीवन के बारहवें साल में पाया था । बच्चा क्या था बिल्कुल नवनीत-सा उजला । सुरसतिया ने बड़े प्यार से उसका नाम रखा था मखन लाल, किन्तु गाँव के मजदूर का बालक इतने बड़े नाम का शायद हकदार नहीं था। लोग उसे मखना कहकर ही बुलाते या सम्बोधित करते। मखना से मेरा परिचय बस इतना ही था कि जब कभी मैं छुट्टियों में गाँव आता उसके साथ गुल्ली-डंडा खेलता । मखना उम्र में मुझसे दो-तीन वर्ष छोटा था ।

सुरसतिया और मखना के बाप दोनों को मरे हुए अब वर्षों बीत चुके थे । गाँव में हैजा फैला था । दोनों अकेला असहाय पाँच साल के मखना को छोड़ चल बसे थे । वही अनाथ मखना एक दिन पूरे गाँव का मेट बनकर अपनी जिन्दगी को सँवार लेगा, इसे किसी ने सोचा भी नहीं होगा । शहर में माँ का तार पाकर कि वह बीमार है मैं गाँव पहुँचा था । तेज बुखार पिछले चार दिनों से उन्हें बिस्तर पर पड़े रहने के लिए विवश कर दिया था । सेवा टहल के लिए सुखिया ही एकमात्र सहारा थी।

सुखिया मखना की पत्नी थी । कद मँझोला, पुष्ट-बदन और गेंहुँआ रंग तथा मोहक चेहरा । जवानी की ताजगी से लहलहाती सुखिया से मेरा कोई पूर्व परिचय नहीं था । तब माँ ने ही सुखिया से मेरा परिचय कराया था—बेटा तुम इसे नहीं पहचानते होगे । सुखिया अपने मखना की पत्नी है । सुरसतिया की मृत्यु के बाद मखना मेरे ही पास तो रहा था । मैंने ही इन दोनों की शादी करायी है । नारी-सुलभ लज्जा-भरी मुस्कान से सुखिया ने एक बार मेरी ओर पूर्ण दृष्टि से देखा । रजत-सी श्वेत दंत पंक्तियाँ और उस मोहक किन्तु निष्पाप दृष्टि से मैं क्षण भर के लिए विभूढ़-सा हो गया था । मखना भी लम्बा-तगड़ा कद्दावर जवान था । आँखें पैनी और चेहरे पर मर्दानी रूखापन । दोनों की जोड़ी सचमुच बहुत अच्छी थी, मैंने मन ही मन अनुमान लगाया ।

आज उसी सुदर्शन कद्दावर मखना और आँखों को बरबस अपनी ओर आकर्षित करने वाली सुखिया को फूटपाथ पर मरियल-सा पड़ा देखा तो पहचान पाना कैसे सम्भव हो सकता था ? किन्तु सुखिया ने जब मुझे मेरा नाम लेकर हाथ फैलाया तो क्षण-भर की झिझक के पश्चात् मैंने उसे पहचान ही लिया ।

मखना को बहुत काम रहता था । गाँव में उसे खोजो तो मालूम पड़ता आज आदमी लेकर शहर गया है । बाद में पता चलता मखना शहर में बसों में आदमी ढोकर भीड़ लगाने के लिए ले जाता है । अब न मजदूरी करता है, न किसी की बेगारी । अब तो मेट बन गया

है। एक बार अचानक शहर में मखना से मेरी भेंट हो गयी। बहुत जल्दी में था। बोला अभी बाबूजी मैं बहुत जल्दी में हूँ। लोगों को हाँककर मैदान में पहुँचाना है। भीड़ इकट्ठी करनी है। जुलूस का टाइम हो गया है। मैं कल शाम को मिलूँगा।

दूसरे दिन सचमुच मखना मेरे निवास पर आ धमका। कल की हुई परेशानियों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया और पुनः नये जुलूस की तैयारी के लिए किसी से मिलने चला गया। यह सब व्यस्तता देखकर मुझे लगा कि सचमुच मखना को समय नहीं मिलता होगा। इसके सिर पर अनेकों काम रहते हैं। किन्तु एक दिन मखना अपनी सारी व्यस्तता को छोड़कर पुनः मेरे निवास पर आया और कहने लगा—बाबूजी मेरे लिए कोई नौकरी का जुगाड़ करा दीजिये। किसी आफिस में चपरासी या दरबानी कुछ भी मिल जाय तो इस दौड़-धूप से छुट्टी मिले। मैं अचानक मखना के बदले तेवर से हतप्रभ—सा हो गया। कलतक तो यही मखना अपने व्यवसाय को बहुत लाभदायक और अपने को कामयाब साबित करने में लगा रहता था। आज अचानक इसमें परिवर्तन क्यों? मैंने मखना से पूछा—क्यों! तुम्हारा आदमी को ढोने वाला ठेका का क्या हुआ? तुम तो कहते थे कि इस काम में बहुत फायदा है। अब क्या फायदा नहीं होता? फायदा क्यों नहीं है? फायदा तो कुछ जरूर है किन्तु इसमें झंझट भी तो कम नहीं है मखना ने उत्तर दिया।

झंझट! कैसी झंझट? मजे से आदमी बस में बैठकर शहर आता है। खूब घूमता-फिरता है। पूड़ी मिठाई खाता है और बड़े-बड़े शामियाना में बैठकर आराम करता है या सोता है या फिर सभा में भाषण सुनता है। इसमें झंझट कहाँ है? तब मखना ने कहा—आप का मैं कैसे समझाऊँ बाबूजी कि ये लोग गरीबों को मूर्ख बनाने का काम मुझसे करवाते हैं और

झंझट में मुझे पड़ना पड़ता है। भीड़ लगाने के लिए आदमी चाहिए। आदमी को बहलाना पड़ता है। कोई क्या ऐसे ही चुपचाप चला आता है। पहलेवाली बात नहीं रही अब। सभी चतुर हो गये हैं। अब भीड़ लगाने के लिये पैसा मांगते हैं।

तब मखना गाँव में गरीबी का दिन गुजार रहा था। मखना ने बतलाया कि एक दिन तीन-चार आदमी जीप पर सवार गाँव आये। बच्चे-बूढ़े सभी जीप को घेरकर चारों ओर खड़े होकर सवार को देखने लगे। गाँव में उस साल सूखा पड़ गया था। भूखमरी थी। लोग जीप देखकर दौड़ पड़े शायद रिलिफ बाँटेगा। किन्तु वे लोग कोई रिलिफ-वलीफ बाँटने नहीं आये थे। उन लोगों को आदमी चाहिए था, आदमी! बाबूजी मैं तो समझा ही नहीं कि ये लोग आदमी का क्या करेंगे। क्या उन्हें शहर में आदमी नहीं मिला जो इतनी दूर आदमी खोजते चले आये। क्या शहर में आदमी का अकाल पड़ गया है? अकाल तो सिर्फ गाँव में पड़ता है, शहर में तो कभी अकाल पड़ते नहीं सुना था। फिर क्या हुआ, मैंने पूछा।

मखना ने कहा कि उन लोगों को शहर में बार-बार सभा करनी पड़ती है। सभा में भीड़ जुटाने के लिए आदमी चाहिए—लाखों-लाख की तादाद में। इतने लोग शहर में क्यों मिलने लगे? यहाँ तो देखता हूँ कि सभी लोग अपने-अपने काम में ही सुबह से शाम तक लगे रहते हैं फिर उन्हें भीड़ जुटाने का कहाँ समय मिलता होगा? दूसरी बात यह भी तो थी कि इन लोगों को देहाती आदमी चाहिए, शहरी नहीं। इसका क्या कारण है, आप कह सकते हैं बाबूजी! मैं चुप रहा। मैं क्या इसका कोई कारण जानता था जो बताता। मखना ने ही कारण बताया। इसका कारण है कि इन्हीं देहाती गरीब-मजदूर को दिखाकर सभा में कहते हैं “मैं इनको खुशहाल करूँगा”। बताएँ यह भी कोई बात

हुई ! खुशहाल करना है तो रोजगार दो, खेत में पानी दो, बिजली दो । किसान मजदूर अपनी मिहनत से खुद-ब-खुद खुशहाल हो जायेंगे । यह क्या, लाखों की भीड़ इकट्ठी कर ली । गरीबों की ओर हाथ हिला-हिलाकर अपने को उनका सेवक कह दिया । उनके माथे पर कभी लाल पट्टी बँधवाया तो कभी हरा कभी काला तो कभी केसरिया और सड़कों पर भूखे-प्यासे चक्कर लगवाया। बस, इसी से आ गई खुशहाली । ये सभी लोग एक ही दावा करते हैं । “हम गरीबों के सेवक हैं ।” बाबूजी मुझे तो समझ में नहीं आता कि हर सभा करनेवाला हम गरीबों को ही दिखा-दिखाकर क्यों कहता है कि “मैं ही इनका सेवक हूँ ।” आपको बताऊँ बाबूजी—सच्चाई तो यह है कि ये लोग किसी का सेवक नहीं है । सब पैसा का खेल हैं, सिर्फ पैसा का बाबूजी । शुरू में तो भुखमरी से तबाह गरीब-मजदूर जीप पर आये साहब लोगों की बात मानकर आनन-फानन में तैयार हो गये, शहर जाकर भीड़ लगाने के लिए और तैयार होते भी क्यों नहीं ? बहुत से लोगों ने शहर देखा भी नहीं था। मुफ्त की सवारी, मुफ्त का भोजन फिर जाते नहीं तो क्या गाँव में भूखों मरते ।

किन्तु अब हालत बदल गयी है । इस ठेका के काम में आमदनी घटती जा रही है और झंझट बढ़ती जा रही है । भीड़ लगाने वालों से शहर जाने को कहो तो पहले पैसा माँगते हैं । पेशगी इतनी मिलती नहीं कि सबको पहले पैसा देकर लाया जाय । अगर किसी तरह बस में टूँसकर लाया भी तो यहाँ की बदइन्तजामी से खफा होकर मुझे ही गाली देते हैं । कहते हैं कि मखना सब पैसा खा गया । हम लोगों को सूखी मूढ़ी खिलाता है । अब सभी लोग खाने को पूड़ी-मिठाई माँगते हैं । भला इतना सब मैं कैसे पूरा कर सकता हूँ । इधर शहरी बाबू जिनके कहने पर मैं आदमी जुटाता हूँ, अलग

नाराज हैं । ये लोग कहते हैं कि मखना तुम आदमी का रेट बढ़ा रहे हो ऐसा अब नहीं चलेगा । गाँव में आदमी इतना महँगा तो नहीं है कि प्रति आदमी 10-10 रुपये दिये जायँ । तुम सम्भल जाओ नहीं तो इसका फल अच्छा नहीं होगा ।

मखना की बातों को सुनकर मुझे लगा कि तब क्या रैलियाँ निकालने के लिए एक उद्योग खड़ा हो चुका है जहाँ सवारी-भोजन, निवास सबके लिए ठेका दिया जाता है । आखिर इतना पैसा सचमुच कहाँ से आता है ? आये दिन शहर में कभी बन्द का माहौल है तो कभी रैली का । रैली क्या है—नगर जीवन का पूर्ण विराम । न कोई सवारी, न कोई शहरी का आवागमन पूरे शहर में तब राज रहता है लाखों-लाख मखना का। जहाँ देखो मखना खड़ा है । कभी लाल पट्टी बाँधकर खड़ा है तो कभी काला । आदमी वहीं है, केवल पट्टी बदली हुयी है । सभी उसी मखना को और उस मखना सदृश्य लाखों-लाख मखना को मालिक कहते हैं । अपने को उन सभी मखनाओं का सेवक कहते हैं । सभी सेवक अपने मालिकों की खुशहाली लाने की शपथ लेते हैं । अजीब स्थिति है ।

मखना ने जाते-जाते उस दिन मुझसे पुनः कहा था—बाबूजी मेरे लिए किसी नौकरी का जुगाड़ जरूर सोचियेगा । इस बार का ठेका पूरा करके अब इस काम से छुट्टी ले लूँगा । किस-किस से झगड़ा मोल लेते रहेंगे । दौड़-धूप के कारण सुखिया का स्वास्थ्य भी ठीक नहीं रहता । सुखिया का नाम सुनते ही मुझे प्रसन्न-मुखी, हरी-भरी सुखिया का चेहरा सामने आ गया । मैंने—पूछा सुखिया को क्या हुआ । भली चंगी तो थी ? सो तो अब भी है, किन्तु लोगों को ढोने के काम में औरतों को सम्भालने का जिम्मा तो उस पर ही छोड़ दिया है । मैं अकेला कहाँ कहाँ देख सकता हूँ ? भीड़ जुटाने में औरतों को भी तो लाना पड़ता है क्योंकि

भाषण में औरतों के जीवन को सुधारने के लिए भी तो बहुत बातें कही जाती है। फिर उनका वहाँ रहना भी तो जरूरी रहता है।

मैंने मखना से पूछा—अभी तुम किस झगड़े की बात कह रहे थे। मखना को जैसे भूली हुई बात एकाएक स्मरण हो आयी। उसने कहा—बाबूजी मैं तो एक मामूली मेट हूँ। गरीब-मजदूर को जमा करने के लिए मुझे पैसा मिलता है, किन्तु जो ठेकेदार मुझसे यह काम करवाता है वह इस काम के लिए मोटी रकम लेता है। किन्तु हम लोगों को थोड़ा पैसा देकर बहला देता है। इस बार 10 हजार आदमी का ठेका मिला है। प्रति आदमी 10-10 रुपये। आदमी आने को तैयार बैठे हैं, किन्तु मैंने साफ कह दिया है—इस बार पूरे पैसे पेशगी के रूप में देने पड़ेंगे नहीं तो हम लोग मुफ्त में झंडा ढोने वाले नहीं हैं। इसी बात को लेकर झंझट हो गयी है।

मखना चला गया इसके बाद फिर कभी वापस नहीं आया। मैं भी अपने काम में व्यस्त हो गया।

मखना और सुखिया दोनों की स्मृतियाँ न जाने कब अपने आप धूमिल हो गयीं। किन्तु आज दोनों की दशा देखकर मन करुणा से भर उठा।

मानव मन भी अजीब है। मखना और सुखिया जिन्हें मैं भूल चुका था वे पुनः मेरे मन में साकार हो उठे। लाख चेष्टा करने पर भी बार-बार उन दोनों के चेहरे भुलाये नहीं भूलते थे। मखना के दोनों पैर कटे थे। निष्प्राण फुटपाथ पर पड़ा था। सुखिया की रजत दंत-पंक्तियाँ झड़ चुकी थी। आँखों की निष्पाप मोहक दृष्टि विलुप्त हो गयी थी और शून्य में पागलों की भाँति हाथ-फैला-फैलाकर भीख मांगने पर विवश थी।

बहुत कोशिश करने के बाद मुझे स्मरण आया कि मखना के 10 हजार ठेकेवाले जुलूस में हंगामा हो गया था। गोली चली थी। समाचारपत्र में भी रिपोर्ट छपी थी। आपस में दो लोग भिड़ गये थे दोनों आदमी जुटाने का काम करते थे।

उनमें एक मेट था और दूसरा ठेकेदार।

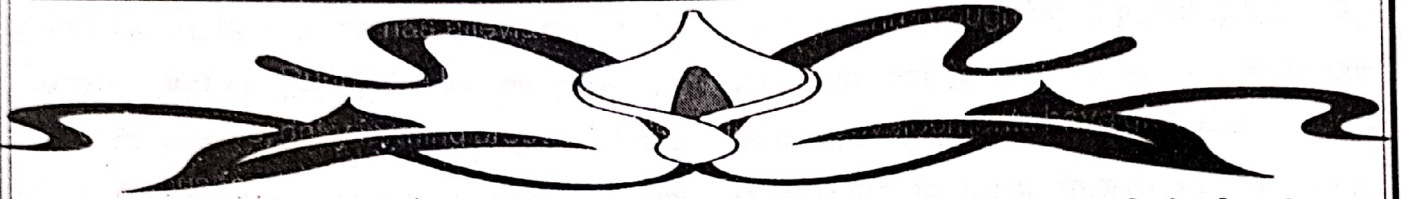
यथा चतुर्भिः कनकः परीक्ष्यते निघर्षणच्छेदन-ताप-ताडनैः ।
तथा चतुर्भिः पुरुषः परीक्ष्यते त्यागेन शीलेन गुणेन कर्मणा ॥

अर्थात्

जिस प्रकार सोने की चार तरह से परीक्षा होती है—कसौटी पर रगड़कर, काटकर, गर्मकर और हथौड़े से पीटकर, उसी प्रकार पुरुषों को भी परीक्षा चार प्रकार से होती है। उसके त्याग से, उसके स्वभाव से, उसके गुण से और उसके कर्म से।

हमारी राष्ट्रभाषा हिन्दी

—श्री नरेन्द्र कुमार सिंह 'नाहर'
एम. ए., एल. एल. बी.,
वरिष्ठ लेखाकार, हिन्दी कक्ष ।



हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा औ' राजभाषा,
सर्वदा समन्वय और एकता की भाषा ।
देता मानवता के विभक्त हृदय को
एक-दूसरे के निकट लाने का सन्देश
हिन्दी में हमारा प्यारा भारत देश ।

हिन्दी ने दिया समस्त विश्व को
प्रेम, बन्धुत्व और आध्यात्मिक नवजागरण,
इसने किया धर्म और समाज की
कुरीतियों और दम्भ का निराकरण ।

यह नहीं भौतिक शक्ति और बल का आवेश,
यह तो दो हृदयों के संगम का संदेश
हिन्दी के माध्यम से हमारा न्यारा देश
इसे लुटाता मुक्तहस्त देश-विदेश ।

कबीर, नानक, जायसी, तुलसी, सूर,
ये सब हैं, हिन्दी के ज्योतिर्मय नूर ।
हिन्दी सर्वदा इन सब की भाषा रही,
जिसमें इन्होंने प्रेम औ' एकता की गाथा कहीं।
रहीम, मीरा, रसखान और घनानन्द
इन सबों ने दिया लोक जीवन को अध्यात्म-आनन्द।

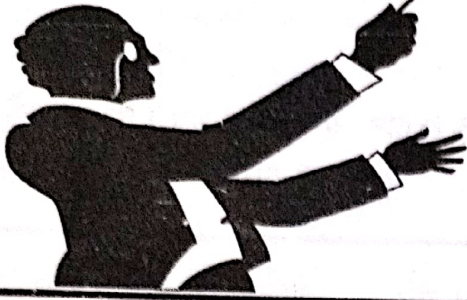
हिन्दी की सुदीर्घ परम्परा
प्रवाहित कर सर्वेक्य और समन्वय की धारा,
देती विश्व- बन्धुत्व का नारा ।
इसमें है लोक-जीवन का सच्चा दर्द,
करती यह सब भाषाओं की कद्र ।

इसने बाधाओं को हैंसते-हैंसते झेला,
राष्ट्रीय आन्दोलन के खेल को खेला ।
इसमें प्रवहमान प्रपात की क्षमता,
निरन्तर गतिशील रहने का उत्साह
ढूँढती सबमें आजादी, सम्मान, समता
कोई अवरुद्ध नहीं कर सकता इसका प्रवाह ।

हिन्दी भारतीयों की विराट शक्ति,
कवियों की श्रद्धा और भक्ति ।
इसका अभ्युदय औ' विकास लोक अन्तस्तल से
हमने चाहा इसे अपने प्राण तल से ।

हिन्दी राष्ट्रीय एकता का एकमात्र सूत्र,
भारतेन्दु, गुप्त, प्रसाद, निराला इसके वरद पुत्र।
कोई नहीं कर सकता बाल बाँका इसका
रहते नेपाली, माखन, दिनकर जैसे क्रांतिकारी लाल,
प्रेमचन्द, जैनेन्द्र, अज्ञेय और यशपाल ।

हिन्दी महान भारत की संजीवनी,
समेटें महापुरुषों की प्राणदायिनी जीवनी ।
दिलाती हमें भौतिक तर्क-जाल से मुक्ति
जगाती आशा, विश्वास, आत्मीयता मानवता के नाम
ऐसी पुण्यमयी हिन्दी को शत-शत प्रणाम ।



क्या क्रोध पर काबू पाया जा सकता है ?

—श्री अजीत कुमार सिन्हा,
अनुभाग अधिकारी

क्रोध एक ऐसा शब्द है जिससे प्रत्येक मनुष्य वाकिफ है। क्रोध का स्थूल स्वरूप हम प्रतिदिन देखते हैं। वह स्वरूप लड़ाई-झगड़े में बदल जाता है। भाई-भाई, पति-पत्नी आस-पड़ोस आदि के झगड़े का मुख्य कारण मनुष्य के अंदर पनपता क्रोध है। क्रोध रूपी ज्वाला मनुष्य के अंदर सुलगती रहती है। जब क्रोधरूपी ज्वालामुखी विस्फोट करता है तो यह कलह का कारण बन जाता है। क्रोध परिवार, समाज, राज्य देश, विश्व सभी जगह व्याप्त है। क्रोध के कारण झगड़े होते हैं जिससे परिवार विखरता है, एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र पर आक्रमण करता है। क्रोध हिंसा का प्रमुख कारण बन जाता है। जातीय दंगे होते हैं। क्रोध का ही प्रभाव है कि भारत के द्वारा हाल ही में किये गये परमाणु परीक्षण के नतीजे के रूप में अमेरिका एवं कुछ विकसित देशों द्वारा भारत के विरुद्ध अपमानजनक टिप्पणी की गई, प्रतिबंध लगाया गया।

आज के भौतिकवादी युग में बिना पैसे के कोई भी वस्तु का क्रय कर पाना असंभव है। ऐसी अवधारणा जनमानस के मन में बन गई है। इस अवधारणा में सहज रूप से मनुष्य सोच भी नहीं सकता है कि पैसे के अभाव में कौन सी ऐसी वस्तु है जिसके विनिमय में एक पैसा भी खर्च करने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु एक ऐसा शब्द है जिसका नाम है—“वचन”।

ऐसा कहा गया है कि “वचने किम् दरिद्रता”। जहाँ तक संभव हो सके मनुष्य को मधुर भाषा का प्रयोग करना चाहिए। कोई ऐसी बात दूसरों को न कही जाए जिससे उनकी भावनाओं को ठेस पहुँचती हो। वाणी में यदि मधुरता है तो क्रोध की मात्रा को कम किया जा सकता है। जैसे—यदि कोई व्यक्ति क्रोध में है तो उसके क्रोध को उत्तेजित करने के बजाय उससे सही ढंग से व्यवहार किया जाय तो निश्चित रूप से उस व्यक्ति का क्रोध कम हो जायेगा। दूसरा उपाय है कि यदि कोई व्यक्ति क्रोध में है तो उसके सामने से उस व्यक्ति को हट जाना चाहिए। फलस्वरूप थोड़ी देर में उसका क्रोध ठंडा पड़ने लगेगा, क्योंकि मनुष्य एक चेतन प्राणी होता है उसमें समझ होती है, निर्णय लेने की क्षमता होती है। यदि किसी क्रोधी व्यक्ति का प्रत्युत्तर क्रोध में नहीं दिया जाय तो वह सोचने को विवश हो जायेगा कि मेरे क्रोधित होने के बाद भी उसने मेरा विरोध नहीं किया। उसके अन्तर्मन की चेतना उसे अवश्य एहसास दिलायेगी कि क्रोध के वक्त मेरी चेतना खो गई थी। यदि कोई व्यक्ति क्रोध में है तो उस क्रोध रूपी ज्वाला को कम किया जा सकता है बशर्ते वह अपने ध्यान को थोड़ा विचलित कर दूसरे कार्य में लगा दे।

अन्ततः मेरी अवधारणा है कि कुछ हद तक क्रोध पर काबू पाया जा सकता है।

“मैं नरक में भी उत्तम पुस्तकों का स्वागत करूँगा, क्योंकि इनमें वह शक्ति है कि जहाँ ये होंगी वहाँ आप ही स्वर्ग बन जायेगा।”

—लोकमान्य तिलक



“मूँछ”

—डॉ जितेन्द्र कुमार, एम. ए. (द्वय), पी-एच.डी.
अनुभाग अधिकारी, हिन्दी कक्ष

प्रत्येक मनुष्य की किसी न किसी चीज में दिलचस्पी रहती है। कोई अच्छे कपड़े पहनने में दिलचस्पी रखता है तो कोई घर में रंग-बिरंगे सामान रखने में। किसी को कुश्ती में अभिरूचि है तो किसी को क्रिकेट में। कोई सिर के बाल बढ़ाने में रूचि रखता है तो कोई ‘मूँछ’ बढ़ाने में। अनेक पुरुष ‘मूँछ’ के बहुत शौकीन हैं।

सिर के बाल तो बुढ़ापे में कम जाते हैं या झड़ भी जाते हैं किन्तु मूँछ मृत्युपर्यन्त साथ रहती है, क्योंकि ये सिर के बाल से कम से कम बीस वर्ष छोटी रहती है। सिर के बाल तो जन्म से होते हैं किन्तु ‘मूँछ’ लगभग बीस वर्ष बाद पैदा होती है। यह छोटी-सी चीज ‘मूँछ’ जो उपरी ओष्ठ के उपर और नासिका-रन्ध्र के नीचे रहती है, अपना एक विशिष्ट महत्त्व रखती है।

वस्तुतः इस छोटी सी चीज मूँछ से मर्दों के आन, वान और शान बेहिसाब बढ़ जाती हैं। मर्दों को जब तृप्त आता है तो मूँछ ऐंठ कर बोलते हैं। अकड़ जमाना या रोब गाँठना हो तो मूँछ ऐंठते हैं। मर्द जब प्रसन्न मुद्रा में रहता है तो मूँछ एवं दाढ़ी पर हाथ फेरता है। बड़ा फख होता है मर्दों को अपनी मूँछ एवं दाढ़ी पर किन्तु औरतें इनसे वंचित रह गई। वह ऐंठे तो क्या? हाथ फेरे तो किस पर? बेचारी के पास न ऐंठने के लिए ईश्वर ने दो चुटकी मूँछ ही दी है और न हाथ फेरने के लिए मुट्ठी भर दाढ़ी। तभी तो औरतों को “अबला” कहा गया है। हमें मजबूर होकर कहना पड़ेगा कि भगवान् ने मर्दों के साथ पक्षपात किया है। मर्दों को मूँछ एवं दाढ़ी दोनों ही मिलीं, औरतों को एक भी नहीं। भगवान् ने ऐसा करके मर्दों के महत्त्व को बढ़ा दिया।

वैयाकरणों ने मूँछ को स्त्रीलिंग बनाया है। तभी तो मूँछ मर्दों की प्यारी है।

मूँछ के बहुत सारे फार्मल कट्स हैं, यथा—बटर फ्लाई कट, फ्रेञ्च कट, तलवार कट, फलसा कट, हिप्पी कट, इंगिलश कट, जर्मन कट, ऐक्टर कट, शोल्जर कट, एरिस्टोक्रेटिक कट, कौलेजियन कट, स्पेक्ट्स कट, अमेरिकन कट, मक्खी कट, हिटलर कट, सफाचट आदि। मूँछ के कट्स से मनुष्य का स्वभाव तक जाना जा सकता है।

राजा महाराजा भी मूँछ एवं दाढ़ी के शौकीन थे। भारत का इतिहास इस बात का साक्षी है कि महाराणा प्रताप, शिवाजी, रज्जीत सिंह, शेरशाह आदि सभी मूँछ एवं दाढ़ी के बड़े ही कद्रदान थे।

मूँछ से किसी भी व्यक्ति का व्यक्तित्व निखर पड़ता है। मूँछ रखने पर इंसान रोबीला एवं जोशीला दीख पड़ता है। मूँछ से मर्द की पृष्ठ है और मूँछ के बिना मर्द छूँछ। है। मूँछ अगर बुरी चीज होती तो भगवान् ने इसे चेहरे पर न जन्माया होता। बलवान, पहलवान, गाड़ीवान, कोचवान, दरवान, धनवान, चरित्रवान, भाग्यवान आदि सभी मूँछ को अत्यधिक प्यार करते हैं। साधु-संन्यासियों एवं मौलवी-मुल्लाओं को भी मूँछ एवं दाढ़ी दोनों से अपार स्नेह है। अपराधियों एवं राजद्रोहियों को भी मूँछ एवं दाढ़ी दोनों से प्यार है क्योंकि इन दोनों के रखने से गुप्तचर विभाग के लोग इन्हें पहचानने में असमर्थ हो जाते हैं। ऋषियों एवं मुनियों को भी मूँछ एवं दाढ़ी से अगाध प्रेम था। प्राचीन काल के विद्वान् जैसे बाल्मीकि, बर्नाड-शाँ आदि भी मूँछ एवं दाढ़ी के प्रेमी थे।

मूँछ बहुत महत्त्वशालिनी है। तभी तो इस पर ना...

प्रकार के मुहावरें बने हैं। यथा—मूँछ ऐंठना, मूँछ पर ताव देना, मूँछ की लाज रखना, मूँछ गिराना, मूँछ मुड़ाना, मूँछ की लड़ाई, मूँछ में घी लगाना, मूँछें उखाड़ना इत्यादि।

मूँछ की उपेक्षा भूलकर भी नहीं करनी चाहिए। आजकल फैशनपरस्ती के नशे में बहुत लोग मूँछ मुड़ा-मुड़ा कर मूँछ विहीन होते जा रहे हैं और मूँछ के महत्त्व को घटा रहे हैं, साथ ही मूँछ का अनादर कर रहे हैं। यह याद रखना चाहिए कि मूँछ एक प्राकृतिक देन है। अतः इसे अप्राकृतिक एवं कृत्रिम तरीके से कतरते रहना पाप है। प्रकृति प्रदत्त वस्तु को काटना-छांटना या कतरना एक जुर्म है। इस अन्याय के लिए ऐसे व्यक्तियों को कड़ी से कड़ी सजा मिलनी चाहिए। सरकार द्वारा अध्यादेश जारी करा कर मूँछ मुड़ाना एक जघन्य पाप करार दिया जाना चाहिए। इस अध्यादेश के तहत मूँछ मुड़ाने वाले व्यक्तियों पर मूँछ-कर्त्तन-कर' लगाया जाना चाहिए। इस प्रस्तावित नूतन कर को 'आय कर', 'मृत्यु कर', 'पेशाकर', 'सम्पत्ति कर' की तरह कठोरता से लगाया जाना चाहिए।

मेरी राय है कि देश के कोने-कोने में मूँछ वर्द्धनी सभाएँ आयोजित की जाएँ और मूँछ-वर्द्धन को तहे-दिल से प्रोत्साहन दिया जाए। देश में जगह-जगह मूँछ-महोत्सव धूम-धाम से मनाया जाना चाहिए। प्रत्येक मोछू भाई को पुरस्कृत करने की व्यवस्था सरकार एवं जनता द्वारा संयुक्त रूप से की जानी चाहिए। 'साहित्य अकादमी' की तरह 'मूँछ अकादमी' बनाया जाए और अत्यधिक लम्बी मूँछवाले को 'मूँछ अकादमी' से पुरस्कृत किया जाना चाहिए। उसे 'मूँछ शिरोमणी' या 'मूँछमार्तण्ड' की उपाधि से विभूषित करना चाहिए। 'गुरुकुलकांगड़ी' की तरह 'मूँछकांगड़ी' का भी निर्माण होना चाहिए और बड़ी-बड़ी मूँछ रखने वालों को 'विद्यावाचस्पति' की तरह 'मूँछ वाचस्पति' की डिग्रियाँ मिलनी चाहिए। पकी एवं खिचड़िया मूँछ वालों को मूँछ में लगाने के लिए खिजाव (हेयर डार्नर) एवं काली मूँछवालों को मूँछ में लगाने के लिए शुद्ध घी या तेल का सरकार द्वारा प्रबन्ध किया जाना चाहिए। वैज्ञानिकों के द्वारा मूँछ-वर्द्धन के लिए यूरिया, सुपरफास्फेट की तरह कोई अच्छा-सा मूँछ-उर्वरक का अनुसंधान किया जाना चाहिए।

जब भी सम्भव हो, सदैव हँसो, यह एक सस्ती दवा है।
प्रसन्नता ऐसा दर्शनशास्त्र है जो ठीक से समझा
नहीं गया। यह मानव जीवन का उज्ज्वल भाग है।

—बाइरन

हँसी की सुन्दर पृष्ठभूमि पर यौवन के सुमन खिलते हैं।
यौवन को तरोताज रखने के लिए आप खूब हँसिये।

जॉज बर्नार्ड शॉ



परिचय

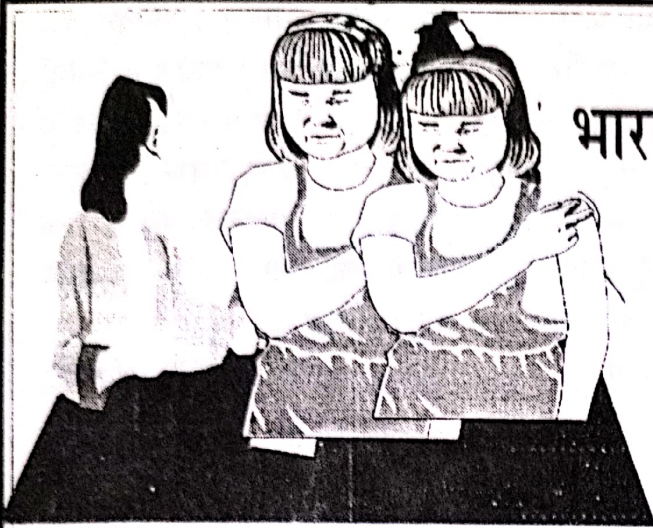
—श्री ओम प्रकाश,
अनुभाग अधिकारी



राम लाल ने अपने बेटों का परिचय कराया ।
श्याम लाल को अपने घर का कच्चा-चिट्ठा सुनाया ॥

यह है प्रथम पुत्र, हेमचंद्र निताई ।
पढ़ने में इसने कभी भी जी नहीं चुराई ॥
हिन्दी में एम. ए. है, डी. लिट. भी है पाई ।
पर हाय री किस्मत, नौकरी नहीं मिल पाई ॥
दूसरे पुत्र का है नाम हर्ष-सुख ।
जैसे आँखाका अँधा, नाम नयन-सुखा ॥
रहता है खोया-सा नहीं है किसी की कोई सुध ।
नौकरी की तलाश में है, भूल गया सुध-बुध ॥
तीसरे लड़के ने नहीं की है पढ़ाई ।
अच्छों-अच्छों की है इसने हजामत बनाई ॥
नेता-उपनेता सबों में है, इसकी बन आई ॥
परिचय क्या दूँ, यह है सैलून में नाई ॥

श्यामलाल बोले यह अटपटा सा लगता है ।
आपकी इज्जत के पोटले में दाग जैसा लगता है ॥
पढ़े-लिखे लड़कों में गँवार जैसा लगता है ।
आपके घर में इसका रहना बेकार जैसा लगता है ।
इसे निकाल कर घर का रेपुटेशन तो बच जाएगा ?
पर श्यामलालजी सोचिए घर का खर्च कैसे चला पायेगा?
पता नहीं, पढ़ा-लिखा लड़का कब कमाएगा ?
इज्जत तो बच जाएगी, पर पेट कहाँ चल पाएगा ?



भारतीय नारियों की सामाजिक दशा

—श्री उमेश चौधरी,
सहायक लेखा अधिकारी

प्राचीन काल से लेकर आज तक समाज के सभी क्षेत्रों में अनेक उतार-चढ़ाव आये। कुछ मामलों में देश ने प्रगति की तो कुछ में उसे निराशा हाथ लगी। विकास और परिवर्तन के इस दौर में नारी भी पीछे नहीं थी और समय के क्रमानुसार उसकी दशा में भी परिवर्तन होता रहा है।

वैदिक काल जो भारतीय सभ्यता का प्रथम चरण था, में आर्थिक विकास के साथ-साथ ग्राम-प्रधान समुदाय पर आधारित समाज का व्यवस्थित रूप विकसित हो रहा था। इस युग में वैदिक धर्म एवं दर्शन तथा अचार-विचार का प्रादुर्भाव हुआ। बाद में उपनिषदों की रचना हुई। इन्हीं स्रोतों से उस काल की नारियों की दशा का पता चलता है। उस काल में स्त्रियों का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था। उन्हें गृहिणी, गृहस्वामिनी एवं सहधर्मिणी की संज्ञा दी गई थी। समाज में उसका स्वतंत्र अस्तित्व था तथा उन्हें पुरुष के समकक्ष माना गया था। धार्मिक एवं लौकिक क्रियाओं में स्त्रियों को अर्द्धांगिनी के रूप में सहयोग करने का अधिकार था। विवाह के मामले में उनके मत और स्वीकृति को महत्त्व दिया जाता था। वेदों में विधवाओं के लिए पुनर्विवाह की बात कही गई है। परिवार में उसके प्रति प्रेम एवं आदर के भाव रखे जाते थे। स्त्री की रक्षा करना पुरुष का सबसे बड़ा धर्म माना जाता था और उनका अपमान करना पाप। शिक्षा के क्षेत्र में भी स्त्रियों

को स्वतंत्रता प्राप्त थी। ऋग्वेद के मंत्रों की रचना करनेवाली अनेक विदुषी महिलाओं का नाम मिलता है। जैसे—घोषा, अपाला, विश्ववारा, लोपमुद्रा, सिकता, निवावरी आदि। समाज में सती प्रथा, परदा प्रथा, बाल-विवाह तथा दहेज प्रथा जैसी कुरीतियों का विकास नहीं हुआ था, लेकिन कन्या की विदाई के अवसर पर उपहार और द्रव्य दिये जाते थे। साधारणतया समाज में एक स्त्री से विवाह करने की प्रथा प्रचलित थी, पर सम्पन्न व्यक्तियों एवं राजाओं में एक से अधिक पत्नियाँ रखने की प्रथा प्रचलित थी। विधवा-विवाह नियोग एवं अन्तरजातीय विवाह प्रचलित थे। अनियंत्रित यौन सम्बन्ध के उदाहरण नहीं मिलते हैं।

ऋग्वैदिक काल के प्रश्नात् उत्तरवैदिक काल आता है, जिसमें बौद्ध एवं जैन धर्म की चर्चा आती है। इस काल में कृषि, व्यापार आदि क्षेत्रों में अभूतपूर्व विकास हुआ। लोहे के बने औजारों का बड़े पैमाने पर प्रयोग होने लगा। राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यापार शुरू हो गया था। देश में अतिरिक्त धन का संग्रह होने लगा तथा प्रभावशाली साम्राज्य का निर्माण होने लगा। इसी काल में वैदिक कर्मकाण्डों के विरोध में बौद्ध एवं जैनधर्म का अविर्भाव हुआ। इस काल में नारियों की स्वतंत्रता पर अंकुश लगने शुरू हो चुके थे। परिवार में स्त्री-पुरुष समानता की भावना समाप्त हो रही थी। उनपर वैवाहिक नियंत्रण लगाये गए। बाल-विवाह को

प्रचलन शुरू होने लगा। विधवा-विवाह पर रोक लगने लगी। ज्ञानार्जन के क्षेत्र में भी वे पुरुषों के पीछे छूट चुकी थी। वे परिषदों एवं सभाओं में प्रवेश नहीं कर सकती थी। धार्मिक कार्यों में उसकी उपस्थिति अनिवार्य थी, पर उनसे वैदिक मंत्रों का उच्चारण नहीं करवाया जाता था। गार्गी, मैत्रेयी आदि स्त्रियों के उदाहरण इस युग में भी मिलते हैं, पर स्त्रियों की सामान्य दशा पहले से गिर चुकी थी। इस काल में समाज जातियों में विभक्त होने लगे थे, जिससे स्त्रियों को पुरुषों के अधीन कर दिया गया था। अब स्त्रियों का कार्यक्षेत्र घर की चहारदीवारी के अन्दर सीमित होने लगे थे। प्रजनन और पारिवारिक दायित्वों के निर्वाह को स्त्रियों के लिए गौरवपूर्ण कार्य माना जाने लगा। संभवतः इसी युग में 'सती प्रथा' का बीजारोपण हुआ था।

उत्तर वैदिक काल के बाद स्मृति तथा धर्मशास्त्रों का युग आया। इस युग में अनेक स्मृतियाँ एवं हिन्दू धर्मशास्त्रों की रचना हुई। इनमें 'मनुस्मृति' प्रधान है। 'मनुस्मृति' को ही प्रायः समाज सम्बन्धी नियमों एवं धर्मों का आधार स्रोत माना गया। एक स्थान पर मनु ने कहा है—“यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।”

यत्रैतस्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ॥ अर्थात् जहाँ नारियों की पूजा होती है वहाँ देवता रमण करते हैं, परन्तु जहाँ उनका अनादर होता है वहाँ के सारे यज्ञानुष्ठान, सारी क्रियाएँ निष्फल हो जाती हैं। विस्मय की बात है कि वही मनु अन्यत्र नारी को दूषण का उद्गम और नरों को दूषित करनेवाला कहता है। मनु की राय में नारी कभी स्वतंत्र नहीं हो सकती। कौमारावस्था में पिता के अधीन, यौवन में पति के अधीन और वृद्धावस्था में पुत्रों के अधीन रहना उचित बताया गया है।

“पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने।

रक्षन्ति स्थावरे पुत्रा न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति ॥

शिक्षा और संपत्ति के अधिकार से भी वे वंचित कर दिए गये थे। विधवा विवाह को पाप घोषित किया

गया। बाल-विवाह को प्रोत्साहन मिला। पतिव्रत धर्म को अत्यधिक गौरवान्वित किया गया। समाज में स्त्रियों और शूद्रों की हैसियत एक समान मानी गई। मनुस्मृति के अनुसार अनैतिक अपराध के लिए स्त्रियों और शूद्रों को अति कठिन सजा देने की व्यवस्था की, जबकि उसी अनैतिक अपराध के लिए सर्वपुरुष एवं द्विजों को कम सजा देने की व्यवस्था थी।

मध्य युग आते-आते महिलाओं में स्वतंत्रता प्राप्ति की संभावना भी खत्म हो गई। इस युग में हिन्दू तथा मुस्लिम संस्कृतियों के सम्मिलित प्रभाव के कारण स्त्रियों के अधिकारों का प्रायः अंत हो गया। समाज में बहुत सी कुरीतियाँ फैल गई थीं। बाल-विवाह की प्रथा चरम पर पहुँच गई थी। हिन्दुओं में विधवा-विवाह को पाप बतलाया गया, लेकिन मुसलमानों में इसे सामाजिक स्वीकृति मिली थी। समाज में स्त्रियों के प्रति विशेष सम्मान की भावना नहीं रह गई थी। शिक्षा एवं संपत्ति के अधिकार से तो वह पहले ही वंचित हो चुकी थी। संस्कृति एवं धर्म की रक्षा के नाम पर अब उन्हें आर्थिक रूप से भी पूर्णरूपेण पुरुषों पर निर्भर बना दिया गया। परदा प्रथा का व्यापक प्रसार हुआ। इस काल में मुस्लिम स्त्रियों को तलाक की सुविधा प्राप्त थी, लेकिन हिन्दू स्त्री के लिए पति को जन्म-जन्मांतर का देवता माना जाता था। स्त्रियों में सती प्रथा का भी विकास हुआ। इस युग में स्त्री एक सम्मानित मानव नहीं, बल्कि भोग के लिए क्रीत दासी बन गई। यह सामंती व्यवस्था का विधान था।

आधुनिक युग के प्रवेश के साथ ही भारत में एक नए प्रबुद्ध मध्यमवर्ग का उदय हुआ, जो पाश्चात्य जगत की मानवीय अवधारणाओं समता, कानून के समक्ष सब बराबर, स्त्री-पुरुष समानता, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, लोकतंत्र का विकास आदि से बहुत प्रभावित था। इस युग में राजनीतिक स्तर पर ब्रिटिश साम्राज्यवाद की स्थापना, पूँजीवाद आर्थिक व्यवस्था का प्रारंभ, ब्रिटिश राज के साथ-साथ नई शिक्षा एवं नई कानून व्यवस्था की स्थापना से भारत में क्रांतिकारी परिवर्तन की प्रक्रिया

प्रारंभ हुई। इस युग में अनेक सुधारवादी कर्मवीरों का प्रादुर्भाव हुआ, जिन्होंने सुधारवादी आंदोलनों के माध्यम से पारंपरिक समाज की कुरीतियों की ओर जनमानस का ध्यान आकृष्ट किया। इन महापुरुषों में राम मोहन राय, स्वामी विवेकानन्द, दयानंद सरस्वती, सर सैयद अहमद खाँ, रानाडे आदि के नाम आते हैं, जिन्होंने व्यापक आंदोलन चलाया, जिससे ब्रिटिश शासकों ने कानून बनाकर सतीप्रथा का अंत किया तथा बाल-विवाह को गैर-कानूनी घोषित किया। सुधारवादी आंदोलनों से रीतियों में नवचेतना आयी, शिक्षा का प्रसार हुआ। तिलक-दहेज के विरुद्ध अभियान चलाया गया। इस प्रकार स्त्रियों की दशा में परिवर्तन की प्रक्रिया का सूत्रपात हुआ।

नारियों में आयी चेतना तथा शिक्षा के प्रचार-प्रसार से भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में स्त्रियों की महत्वपूर्ण भागीदारी रही। जब गाँधीजी ने आंदोलन का नेतृत्व संभाला, तब यह मान लिया गया कि स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त होने चाहिए। उन्होंने परदा-प्रथा समाप्त कराने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। स्वतंत्रता आंदोलन में हजारों स्त्रियों ने भाग लिया। इस प्रकार स्त्रियों की दशा में आमूल परिवर्तन की पृष्ठभूमि तैयार हो गई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् जो भारत का संविधान बना, उसमें नारियों की दशा को सुधारने के लिए अनेक प्रावधान किये गये। वयस्क स्त्रियों को मताधिकार के प्रयोग का अधिकार दिया गया। लिंग के आधार पर समाज में कोई भेदभाव नहीं बरते जाने से सम्बन्धित उपबन्ध भी बनाये गए। समान काम के लिए समान वेतन का सिद्धांत स्वीकार किया गया। उन्हें समाज के प्रत्येक क्षेत्र में कार्य करने का अधिकार दिया गया। संविधान में उन्हें संपत्ति का भी अधिकार दिया गया तथा हिन्दू स्त्रियों को भी तलाक का अधिकार मिल गया। समाज में विधवा पुनर्विवाह, तलाक के बाद विवाह, अंतरजातीय विवाह को कानून द्वारा स्वीकृति मिल गई।

शिक्षा के क्षेत्र में भी उन्हें पुरुष के समान अधिकार प्रदान कर दिए गए। इस प्रकार आधुनिक भारत में विभिन्न कानूनों के माध्यम से स्त्रियों की दशा में परिवर्तन लाने का प्रयास किया गया। सिद्धांत रूप से तो स्त्रियों को सभी अधिकार मिल गए। उनकी स्वतंत्रता एवं अधिकार के क्षेत्र में विस्तार हुआ। उन्हें प्रत्येक क्षेत्र में पुरुष व समान अधिकार एवं हैसियत प्रदान कर दी गई है, लेकिन व्यवहार में अभी भी भारतीय समाज पुरुष प्रधान है। स्त्रियों को आंशिक अधिकार ही प्राप्त है। नर-नारी समानता की ओर बढ़ने की प्रक्रिया निरंतर जारी है, यद्यपि अभी बहुत सारी मंजिलें तय करनी हैं। यह परिवर्तन अधिकांश उच्च एवं मध्यम वर्ग तक सीमित है, जबकि करोड़ों निम्नवर्गीय स्त्रियों की दशा में उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं हुए हैं। आज भी गाँवों में स्त्रियों की शिक्षा का अनुपात काफी कम है। विकास की रोशनी उन तक नहीं पहुँच पायी है। आज भी उन्हें दो वक्त की रोटी नहीं मिल रही है, पहनने को उनके पास कपड़े नहीं हैं, सुबह से शाम तक खेतों-खलिहानों में काम करती हैं तथा शाम को लकड़ी जलाकर चूल्हे को गरम करती हैं। अधिकार क्या होते हैं। यह सोचने की न तो उनके पास क्षमता है और न समय। संविधान तथा कानून में अनेक व्यवस्थाओं के बावजूद आज भी महिलाएँ सुरक्षित नहीं हैं। चाहे गाँव हो या शहर, वह बलात्कार की शिकार हो रही है, दहेज दानवों द्वारा वह जलायी जाती है, विज्ञापनों के माध्यमों से उनके शरीर का खुला प्रदर्शन कर उनका शोषण किया जा रहा है। समाज में व्याप्त इन कुरीतियों को दूर करके ही नारियों को उचित मान-सम्मान दिलवाया जा सकता है। सौभाग्य की बात है कि आज नारियों में चेतना है, वे सजग हैं, उनमें शिक्षा का विकास हो चुका है तथा वह अपने अधिकार को समझती है। इसके अलावे उनकी दशा को सुधारने एवं समाज में उन्हें गौरवपूर्ण स्थान दिलाने हेतु अनेक महिला संगठन, स्वयंसेवी संस्था तथा सरकार भी प्रयासरत हैं।



राजा की उत्पत्ति

-सुश्री लीना कुमारी,
सुपुत्री: श्री सतीशचन्द्र राउत
वरिष्ठ उप-महालेखाकार, बिहार, पटना

प्राचीन काल में जब पृथ्वी पर कोई राजा नहीं था और सभी मनुष्य वन्य पशुओं की तरह टोली बनाकर रहते थे और पशुओं को मारकर उनके मांस से पेट भरते थे उस समय धीरे-धीरे उन टोलों में अराजकता बढ़ने लगी। बल-शाली दुर्बलों को दबाने लगे और किसी प्रकार की सुख-शान्ति जीवन में शेष नहीं रह गई। कभी भी एक टोल दूसरे टोल पर आक्रमण कर देती थी और यदि दूसरी टोल को कमजोर पाता था तो उसको अच्छे स्थान से भगा देता था तथा उसके प्राणियों का मार डालता। इस तरह अशान्ति फैल गई तथा धर्म और न्याय को तो कोई जानता ही नहीं था। उस समय तो बल की पूजा होती थी। अधिक बलशाली मनुष्य जो कुछ कर डालता था वही उसका न्याय था। तालाब में जिस तरह बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है उसी तरह का मत्स्य न्याय उस समय चलता था। इस अराजकता से परेशान होकर कुछ अच्छे शान्तिप्रिय मनुष्यों ने यह नियम बना दिया कि जो मनुष्य कटुवादी, व्यभिचारी

और चोर होगा उसे सभी त्याग देंगे। कुछ दिन तक सबने इस नियम का पालन किया लेकिन फिर यह भी नहीं चला। सभ्यता के अभाव में न्याय की जो सीमा बाँधी गई थी वह टूट गई और फिर उसी तरह की अराजकता छा गई। तब प्रजागण अत्यन्त दुःखी होकर लोकपितामह ब्रह्मा के पास पहुँचे और प्रणाम करके बोले 'हे भगवन् ! राजा के न होने के कारण चारों ओर अराजकता फैली हुई है। उस अराजकता के बीच हम नष्ट हुए जा रहे हैं। इन्हें हम आप से एक राजा देने के लिए प्रार्थना करते हैं। हम सब उसकी आज्ञा का पालन करेंगे और वह इसके बदले हमारी रक्षा करेगा। प्रजागण की प्रार्थना सुनकर ब्रह्मा ने कहा, "हे मनुष्यों ! मैं तुम्हें एक राजा देता हूँ। तुम सब उसकी आज्ञा का पालन करना। वह पृथ्वी पर फैली अराजकता को पूरी तरह नष्ट कर देगा।" यह कहकर ब्रह्मा ने मनु को बुलाया और उनसे कहा, "हे मनु ! तुम मनुष्यों के राजा बनो और पृथ्वी पर फैली अराजकता को नष्ट करो।" लोकपितामह

की आज्ञा को मनु ने स्वीकार तो कर लिया लेकिन फिर वे डरते हुए बोले, "हे भगवन् ! मैं पाप से बहुत डरता हूँ। दुष्ट मनुष्यों के ऊपर शासन करना और उन्हें किसी तरह धर्म के मार्ग की ओर उन्मुख करना अति कठिन कार्य है। मेरी समझ में नहीं आता कि पृथ्वी पर फैले इस पाप को मैं कैसे मिटा पाऊँगा।" मनु को इस तरह भयभीत देखकर ब्रह्मा ने कहा,—"हे मनु ! तुम किसी तरह का भय मत रखो। आपके शासन कार्य में किसी तरह का पाप नहीं लगेगा। पाप का भागी तो पापी ही होगा। हम लोग आपका कोष बढ़ाने के लिये पशुओं और सुवर्ण का पचासवाँ भाग तथा अन्न का दसवाँ भाग देंगे। धन देकर यदि कोई किसी सुन्दरी कन्या के साथ विवाह करने के लिये प्रस्तुत होगा, वहाँ पहला अवसर उस सुन्दरी से विवाह करने का आपको ही दिया जायेगा। जैसे इन्द्र के पीछे देवता चलते हैं वैसे ही आवश्यकता पड़ने पर अस्त्र-शस्त्र का प्रयोग करने वाले योद्धा आपके पीछे चलेंगे। इससे आपका बल बहुत बढ़

जायेगा और आप दुष्टों को अच्छी तरह से दबा सकेंगे। "हे मनु ! आप हमारा उसी तरह से पालन करिये जैसे कुबेर देवताओं का पालन करते हैं। आपके पराक्रम से रक्षित हम लोग जो भी धर्म-कर्म करेंगे उसके फल का चौथा भाग आपको देंगे। "हे मनु आप अपने मन के भ्रम और शंका को हटाकर शत्रुओं को सूर्य की तरह पीड़ित करके विजय के लिए निकलिये हमें पूर्ण विश्वास है कि आप हमारी सहायता से दुष्टों का पूरी तरह दमन कर सकेंगे जिससे पृथ्वी पर फैली यह अराजकता पूरी तरह मिट जायेगी।" प्रजा के इस तरह आश्वासन दिलाने पर मनु पूरी तरह आज्ञा का पालन करने के लिए तैयार हो गये। उसी समय अनेक योद्धा उनके सैनिक बनने के लिए तैयार हो गये जिनसे उन्होंने एक विशाल सेना बना ली। उस सेना की सहायता से मनु ने दुष्टों का दमन करना प्रारम्भ कर दिया और कुछ ही दिनों में चारों तरफ फैली हुई अराजकता को मिटा दिया। इस तरह मनु पहले राजा हुए। वहीं से राजा की उत्पत्ति होती है।

येषां न विद्या न तपो न दानं, न चापि शीलं न गुणो न धर्मः।
न मृत्युलोके भूवि भारभूताः, मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ॥

अर्थात्

जिसके पास न विद्या है, न तप है, न दान है, न अच्छा स्वभाव है, न गुण है और न धर्म है यानी जो विद्वान, तपस्वी, दानी, शीलवान, गुणवान एवं धर्मनिष्ठ नहीं है वह इस जगत में पृथ्वी पर भार है, वह मनुष्य रूप में पशुवत् ही विचरण करता है।



अमर कवि: विद्यापति

—श्री महेन्द्र मोहन मिश्र,
वरिष्ठ लेखा परीक्षक

कवि कोकिल विद्यापति युग द्रष्टा के रूप में अवतरित हुए। जिस प्रकार होमर को सात नगरों के कवि के रूप में जाना गया, विद्यापति भी होमर की तरह ही अनेक प्रान्तों और अनेक भाषाओं के कवि के रूप में प्रतिष्ठित हुए। यदि साहित्य जीवन की अभिव्यक्ति है तो निश्चय ही वही साहित्यकार सर्वाधिक लोकप्रिय होगा जो जन सुलभ भाषा में सम्पूर्ण लोक जीवन को अपनी साहित्य-सीमा में आबद्ध कर सकेगा। जो साहित्य जन-जीवन को प्रभावित नहीं कर सकेगा, जो जन साधारण द्वारा पठनीय नहीं होगा, वह अत्युत्कृष्ट होने पर भी अपनी जनप्रियता खो देगा। 'कामायनी' को हिन्दी साहित्य का सर्वोत्कृष्ट ग्रंथ माना जाता है, साहित्यक स्तर पर सर्वोच्च महत्त्व भी है, परन्तु औसत पाठक के लिए दुरुह होने के कारण उसकी ख्याति सर्वत्र नहीं फैल सकी है। प्रसाद जी महाकवि होते हुए भी जनप्रिय कवि के अपेक्षित गौरव को नहीं प्राप्त कर सके। महापंडितों की सीमित मंडली में रहकर कोई भी साहित्यकार जनप्रियता का गौरव नहीं पा सकता। तभी तो जिसने कलम नहीं पकड़ी, भाषा नहीं सीखी, अपनी वाणियों से जनसमाज को प्रभावित करने के कारण ही किसी महापंडित और महाकवि

से कबीर का व्यक्तित्व उच्च है।

विद्यापति की प्रतिभा बहुमुखी थी। लोकनायक के साथ वे एक सामाजिक कवि थे। समाज के प्रत्येक पक्ष का विवेचन करने में वे अपना कर्तव्य समझते थे। वे एक दरबारी कवि अवश्य थे, परन्तु अपने चतुर्दिक व्याप्त वस्तु एवं सामाजिक परिवेश के प्रति काफी जागरूक थे। उनकी रचना का प्रचार-प्रसार गगनचुंबी अट्टालिका से लेकर झोपड़ी तक हुआ। समाज के सभी वर्ग के लोगों ने उनकी रचना को पसनाया।

लोकप्रियता की कुछ प्रमुख विशेषताएँ होती हैं और वे सभी विद्यापति में परिलक्षित पायी जाती हैं। जैसे लोक जीवन की अभिव्यक्ति, लोकभाषा का माध्यम, स्वाभाविक वर्णन, मधुर, भावना, मनोहर कला पक्ष तथा लोकप्रियता का सभ्यक निदर्शन विभिन्न पक्षों के आधार पर किया जा सकता है। सामंत कवि होकर लोकोन्मुख होने वाले कवि विद्यापति ही हैं। इन्होंने राजा से अधिक प्रजा का वर्णन किया है। कहा जाता है कि दरबारी वातावरण में जाकर साहित्य कुत्सित हो जाता है, परन्तु विद्यापति का व्यक्तित्व श्वेत कमल की तरह है जो राजदरबार से पोषण पाकर भी—अपना स्वतंत्र विकास कर सका है।

विद्यापति ने सभी अवस्थाओं के लोगों

के अनुकूल पद रचा है । यदि युवक समाज “ससन परस खसु अम्वर रे देखलि धनि देह ” गाकर मधुर कल्पना से झूम उठता है तो कामिनियाँ नव-वधू को कोहवर में ले जाती हुयी” सुन्दरि चललिहुँ पहु घर ना’ गाती हुयी आनन्द स्रोत में डुबती उपलाती चलती हैं, वृद्ध ‘माभव हम परिणाम निरासा’ गाकर अश्रु बहाते हैं और शिव भक्त डमरू हाथ में लिये “कखन हरब दुःख मोर हे भोला नाथ” गाते हुए तन्मय हो जाते हैं। जन-जीवन की सभी प्रकार की भावनाओं से सभी प्रकार के लोगों को एक साथ विभोर करने की क्षमता महाकवि विद्यापति में ही थी ।

बेमेल विवाह बूढ़े वर के साथ तरुणी का विवाह एवं तरुणी के साथ बालक का विवाह अदूर-दर्शितापूर्ण लोक प्रथा का सूचक था जिसका अपनी रचना के माध्यम से विरोध करते हुए जन-जन तक फैलाया । महाकवि की पदावली में लोक जीवन की इस विषमता का साहित्य आलोचना द्रष्टव्य है—

“हम नहि आजु रहब एहि आँगन ।
जौं बुढ़ होयत जमाई, गे माई ॥”
“पिया मोर बालक हम तरुणी गे ।
कौन तप चुकलहुँ भेलहुँ जननी गे ।”

लोकगीत के भाव अपने प्राकृत रूप में अभिव्यक्त होते हैं । उसके छन्द, धुन, स्वर तथा शब्द चयन आदि में अकृत्रिमता विद्यमान रहती है । इन सभी दृष्टियों से विद्यापति के गीत उत्कृष्ट प्रतीत होते हैं। “के पतियाले जाओत रे मीरा प्रियतम पास” में लोकधुन के साथ-साथ भावना की विह्वलता तथा अभिव्यक्ति की स्वाभाविकता भी परिलक्षित है। विद्यापति के गीत पुरुष और नारी दोनों के द्वारा समान रूप से गाये जाते हैं— यह श्रेय किसी अन्य कवि को प्राप्त नहीं है । लोक जीवन का इससे अधिक सफल कवि और क्या हो सकता है ?

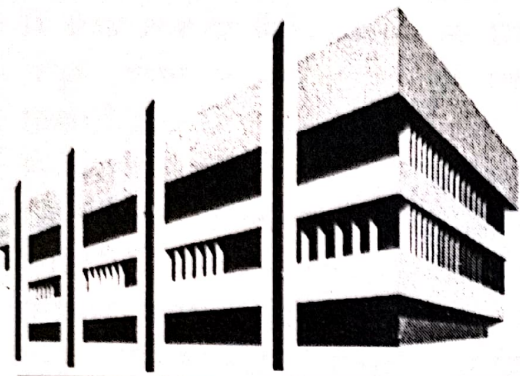
इनकी गीत परम्परा मिथिला में तो पूर्ण विकसित हुई ही साथ-साथ इनका अनुकरण विषय छन्द एवं शैली बंगाल, आसाम, उड़ीसा तथा नेपाल तक हुआ । बंगीय वैष्णव सुधारक महाप्रभु चैतन्य विद्यापति के गीत को गाते-गाते आत्मविभोर होकर मूर्छित हो जाते थे ।

वस्तुतः विद्यापति की पदावली हृदय के रसरागों की, सरसता, उक्तियों की विचित्रता, मिलन का आनन्द, विरह का उत्ताप, पदों का लालित्य एवं भावोल्लास की प्रदर्शनी है जिसे शताब्दियों से उत्कृष्टित जन समाज देखता आया है और अनन्तकाल तक देखता रहेगा ।

शैले शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे।
साधवो नहि सर्वत्र चन्दनं न वने वने ॥

अर्थात्

प्रत्येक पर्वत पर मणि नहीं होता । प्रत्येक हाथी के मस्तक में मोती नहीं होता । सभी जगह साधु परोपकारी नहीं होते । सभी जंगल में चन्दन का पेड़ या चन्दन नहीं होता ।



यह ए. जी. कार्यालय हमारा

—श्री राम बाबू राम,
अनुभाग अधिकारी

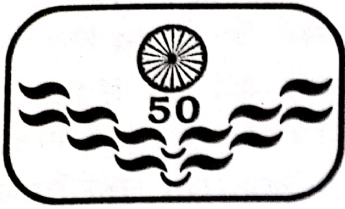
यह ए. जी. कार्यालय हमारा
राज्य के अन्य सभी कार्यालयों से भी बढ़कर है प्यारा,

यहाँ का स्वच्छ, सुन्दर, वातावरण अनुशासित,
कर्मचारियों की कर्मठता से सदा प्रकाशित,
यहाँ कार्य प्रतिदिन प्रगति पथ पर चलता,
भाँति-भाँति दावे को शीघ्रतिशीघ्र निष्पादित करता ।

जहाँ प्रवाहित लोकहित धारा,
यह ए. जी. कार्यालय हमारा,

भली तत्परता और कठिनाई,
पर होती हरगिज नहीं लड़ाई,
यहाँ रहते सभी कर्मचारी मिल-जुलकर, मानों ये हैं सहोदर भाइ़ ।
यहाँ सभी का हँसता गाता जीवन सारा,
यह ए. जी. कार्यालय हमारा ।

बुद्धि, विवेक, विद्या में कर्मचारी और पदाधिकारी उँचे,
ए. जी. और डी. ए. जी महोदय कितने सच्चे,
सरकारी खजाने के घपलों को निरुत्साहित करने में पक्के ।
पूरे राज्य के वित्त लेखा और लेखापरीक्षा इनकी उम्मीदें
इसकी वित्तीय क्रियाविधि और प्रक्रिया पर गर्व करते हम अच्छे ।
भारत के सी. ए. जी. महोदय का स्नेह है न्यारा
यह ए. जी. कार्यालय हमारा ।
राज्य के अन्य सभी कार्यालयों से भी बढ़कर है प्यारा ।



स्वतंत्र भारत के पचास वर्ष और "हिन्दी"

—श्री अवधेश कुमार सिन्हा,
सहायक लेखा अधिकारी

स्वतंत्र भारत के पचास वर्ष पूरे होने के पश्चात् भी हम भारतवासी यह दावे के साथ नहीं कह सकते कि हम सब अंग्रेजी के गुलाम नहीं हैं। बड़े-दुख की बात है कि हमारी बोली और वेष-भूषा में अंग्रेजी की पकड़ इतनी मजबूत है कि देहाती क्षेत्र, अविकसित गाँव दूर-दराज के ऐसे क्षेत्र जहाँ आज भी प्राथमिक शिक्षा की समुचित व्यवस्था नहीं हो पायी है वहाँ के बच्चे अपनी माता एवं अपने पिताजी को मम्मी एवं डैडी, टा-टा, बाय-बाय, गुडनाइट, गुडमॉर्निंग इत्यादि शब्दों का प्रयोग इस सहजता के साथ करते हैं मानों यही उनकी मातृभाषा हो। यह बात सही नहीं है कि अंग्रेजी भाषा से ही किसी देश का विकास संभव है। विश्व में ऐसे कई देश हैं जहाँ इस भाषा को अपने देश की भाषा से बहुत कम महत्त्व दिया गया है और वह विश्व में पूर्ण विकसित एवं समृद्ध है। उदाहरणार्थ, जापान जर्मनी, कोरिया इत्यादि। ये ऐसे राष्ट्र हैं जिन्होंने भारत की तरह, अंग्रेजी भाषा में अपने देशवासियों को कभी सराबोर होने नहीं दिया। इन देशों के नेता बड़ी सहजता से अपनी भाषा में विश्व के अन्य देशों में जाकर अपने

भावों का प्रयोग करते हुए कभी झिझकते नहीं हैं। आखिर हमारे ही देश के लोग अंग्रेजी भाषा से प्रभावित क्यों हैं ?

"हिन्दी" हमारे देश की 'राजभाषा' है और हम यह जानते हैं कि हमारा देश बहुभाषी लोगों का देश है, इस परिस्थिति में पूरे देश के लिए किसी एक विशिष्ट भाषा का राष्ट्रभाषा के रूप में उभर पाना, विकसित होना एवं समूचे देश के नागरिकों द्वारा स्वीकार किया जाना थोड़ा कठिन तो अवश्य है परन्तु, हिन्दी भाषा का राजभाषा बनने मात्र से किसी प्रांतीय भाषा को किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँच सकती। यह भाषा तो पूरे देश को एक सम्पर्क भाषा के रूप में सम्पर्क सूत्र की कड़ी में बाँधती है। इस देश को अपनी प्रांतीय भाषा से किसी प्रकार का खतरा दिखलाई नहीं पड़ता। खतरा तो सिर्फ अंग्रेजी से ही दिखायी पड़ता है जो आज हमारे देश में एक प्रांत का दूसरे प्रांत की सम्पर्क भाषा बनती दिखायी पड़ रही है। आजादी से पूर्व जब इस देश में कई छोटे-छोटे देश हुआ करते थे तो उस वक्त एक दूसरे से सम्पर्क की भाषा संस्कृत हुआ करती थी। परन्तु अंग्रेजों के सौ वर्षों के शासन ने इस देश

की अपनी सम्पर्क भाषा को तहस-नहस कर दिया एवं जब तक वे रहे उनकी ही भाषा का दबदबा रहा। आजादी के बाद 14 सितम्बर, 1949 में आजाद भारत की संविधान सभा ने देवनागरी लिपि में लिखे जाने वाली हिन्दी भाषा को 'राजभाषा' का दर्जा दिया। उस दिन की याद में आज भी हम 14 सितम्बर को "हिन्दी दिवस" के रूप में प्रतिवर्ष मनाते हैं। भारत जैसे विशाल देश में 'हिन्दी' के राजभाषा बनने पर यहाँ के कई प्रान्तों में काफी विरोध का भी सामना करना पड़ा था एवं आज भी कई प्रान्त इस भाषा को उतना सम्मान नहीं देते हैं एवं अपने ही प्रान्त की भाषा के विकास में रूचि रखते हैं। वे अंग्रेजी भाषा को अपनाने एवं उसे सम्पर्क भाषा के रूप में इस्तेमाल करते हैं।

आज की इस भाग-दौड़ में अंग्रेजी का दामन थामकर लोग आसानी से आगे निकलने में कामयाब हो जाते हैं और वे बेचारे जो अपनी 'राष्ट्रभाषा' के माध्यम से आगे बढ़ना चाहते हैं, पीछे छूट जाते हैं, यह कितने दुःख की बात है।

"राजभाषा" के विकास में तथा इसे स्थापित करने में विभागीय प्रमुखों का काफी बड़ा योगदान उनके स्तर से हो सकता है। वे जैसे कर्मचारी / अधिकारी, जो हिन्दी में कार्य करने की इच्छा रखते हों एवं करते हों, को समय-समय पर प्रोत्साहित करें एवं उनके उत्साह में किसी तरह की कमी न आने दें ताकि जैसे कर्मचारी/पदाधिकारी निर्बाध रूप से हिन्दी में अपने दायित्वों का

निर्वहन कर सकें। जैसे हिन्दी का विकास प्रत्येक वर्ग के लोगों की सहायता एवं योगदान से ही संभव है। इसे कार्यालय तक सीमित रखकर विकसित नहीं किया जा सकता। जबतक प्रत्येक भारतवासी एकजुट होकर 'अंग्रेजी' भाषा के स्थान पर हिन्दी भाषा का अधिकांश प्रयोग नहीं करते हैं तबतक हिन्दी का बहुमुखी विकास संभव नहीं है। यों मैं अंग्रेजी का विरोध नहीं करता और यह मानने में भी मुझे कोई संकोच नहीं कि 'अंग्रेजी' एक समृद्ध भाषा है और हम भारतवासियों ने इस भाषा से काफी कुछ सीखा भी है, परन्तु कोई भी देश किसी भी विदेशी भाषा के आधार पर महान नहीं बन सकता क्योंकि विदेशी भाषा जन सामान्य की भाषा कभी नहीं बन सकती। कोई भी राष्ट्र तभी महान बन सकता है एवं पूर्ण विकसित हो सकता है जब वह अपनी राष्ट्रभाषा से पूरे देश को एकता की माला में समेट सकने में सक्षम हो जाय। अतः हिन्दी भाषा को इज्जत देना, सम्मानित करना एवं इसे मन के अन्तरतम से अपनाना हमारा पुनीत कर्तव्य है, सच्चा धर्म है। हम हिन्दी बोलेंगे एवं औरों को भी बोलने के लिए प्रोत्साहित करेंगे। आइए, हम अपनी स्वाधीनता की स्वर्ण जयन्ती के समापन पर यह प्रण करें कि हम भारतवासी अपने दिलों में हिन्दी के प्रति जागरूकता पैदा करेंगे एवं अपनी राष्ट्रभाषा के सम्मान में अपने आपको न्योछावर कर देंगे।

जय हिन्दी ! जय भारत !



हास्य-व्यंग्य

—श्री ओम प्रकाश
अनुभाग अधिकारी

1. एक सज्जन ने महाविद्यालय के किसी व्यक्ति से पूछा—कृपया बताएँ 'चेमेस्ट्री' के प्रो० चोपड़ा साहब कहाँ रहते हैं ?

महाविद्यालय के उस व्यक्ति ने आगंतुक को समझाया कि अंग्रेजी में 'चेमेस्ट्री' नहीं कहा जाता। सी-एच से 'क' का उच्चारण होता है इसलिए 'केमेस्ट्री' कहिए। उस सज्जन ने तपाक से पूछा—तो फिर यही बता दीजिए कि 'केमेस्ट्री' के प्रो० कोपड़ा साहब कहाँ रहते हैं ?

2. दो स्त्रियाँ आपस में बैठे गप्पें हाँक रही थीं। एक ने कहा—मेरे पतिदेव तो इतने बड़े विद्वान हैं कि उनका लिखा कोई दूसरा पढ़ ही नहीं सकता।

दूसरे ने कहा—अरी जा, मेरे पति तो तुम्हारे पति से भी महान हैं। ये तो विद्वानों के विद्वान हैं, उनका लिखा दूसरों की क्या मजाल खुद भी नहीं पढ़ सकते।

3. एक बस में एक युवक धड़धड़ाते हुए घुसा और एक वृद्ध सज्जन को सीट से उठाते हुए बोला—

अबे बुढ़े, उठो मैं बैठूँगा।

उस वृद्ध व्यक्ति ने कहा— मैं नहीं उठूँगा। तूने मुझको बुढ़ा क्यों कहा ? बस में बैठे आस पास के लोग हँस पड़े। उस युवक ने भी मुस्कुराते हुए पूछा— बुढ़े को बुढ़ा न कहूँ ते और क्या कहूँ ?

बुढ़े ने कहा—कहो भूतपूर्व नव जवान। भूतपूर्व मंत्री हो सकता है, भूतपूर्व विधायक हो सकता है तो मैं भूतपूर्व नवजवान क्यों नहीं हो सकता ?

4. जज साहब ने फटकार लगाई—तुम्हें घूस लेते हुए शर्म नहीं आती।

मुजरिम:— आती हैं, किन्तु नेताओं को चंदा लेते एवं डॉक्टरों को फीस लेते देखकर चली जाती है।

5. अधिकारी कर्मचारी से—तुम हमेशा देर से आते हो !

कर्मचारी— जी, श्रीमान् !

अधिकारी— जवाब दो।

कर्मचारी— अकेला हूँ, खाना बनाना पड़ता है।

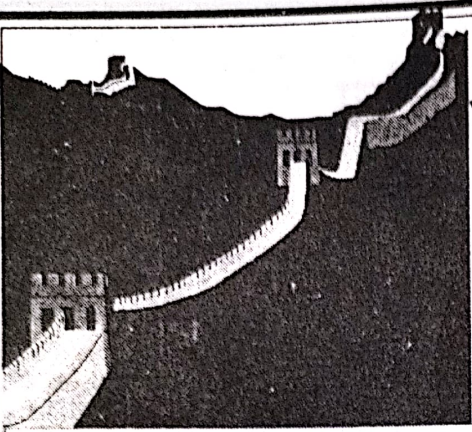
अधिकारी— शादी क्यों नहीं कर लेते ?

शादी कर लेने के बाद अधिकारी ने पुनः डाँटते हुए कहा—अब तो तुम पहले से भी देर से आते हो।

कर्मचारी—जी, श्रीमान पहले एक आदमी का खाना बनाना पड़ता था, अब दो का बनाना पड़ता है।

6. एक मैजिस्ट्रेट अपराधी से—तुम्हें तो फाँसी की सजा मिली है। फाँसी पर लटकने से पहले बताओ कि तुम्हारी अन्तिम इच्छा क्या है ?

अपराधी मैजिस्ट्रेट से—हुजूर, मेरी अन्तिम इच्छा यही है कि आप मेरे स्थान पर आ जायें।



बिहार की सांस्कृतिक धरोहर : इटखोरी

—श्री सीताराम सिंह,
वरिष्ठ लेखापरीक्षक

बिहार भारत का अग्रणी राज्य रहा है। सम्राट अशोक, बिम्बसार, गौतम-बुद्ध, भगवान महावीर एवं गुरु गोविन्द सिंह जैसे ऐतिहासिक पुरुषों की कर्म-भूमि बिहार ही है। राजगीर बोध-गया, वैशाली, बिहार-शरीफ (नालंदा) पावापुरी, पटना-साहिब एवं पारसनाथ जैसे रमणीक स्थल यहाँ अवस्थित हैं। इसी तरह का एक सुरम्य-स्थल इटखोरी का भदुली-मंदिर भी है। यहाँ श्याम-तारा की एक विशालकाय मूर्ति है, जिसे लोग भद्रकाली के रूप में पूजा करते हैं। यह गहरे हरे रंग की है। माँ-तारा को वरदान देने की मुद्रा में खड़ा चित्रित किया गया है। साथ में अशोककांता तथा इकजाता दो सहयोगिनियों को भी चित्रित किया गया है। यहाँ एक शिला-लेख भी है, जिसमें बौद्ध देवी तारा तथा प्रतिहार-वंशी राजा महेंद्र पाल देव का नाम पाली-भाषा में अंकित है। आपादमस्तक इसकी ऊँचाई 52 इंच है। संपूर्ण मूर्ति 72 इंच ऊँची है। एक हाथ में कमल तो दूसरे हाथ वरद मुद्रा में सुशोभित है। इसे खडिरवानी तारा भी कहते हैं। इन्हें अमोघ-सिद्धि की देवी भी कहा जाता है। इनके पैर के नीचे कमल का फूल चित्रित है।

अज्ञेय जी के पिता श्री हीरानंद शास्त्री, 1920 में बिहार के पुरातत्व-सर्वेक्षण के प्रभारी थे। नालंदा में एक शिला-लेख मिला था, जिसमें यह लिखा है नालंदा-विश्वविद्यालय के सातवें-तल एवं तारा के मंदिर का निर्माण, सोमपुरा के विपुल श्री मित्र ने किया था। इनका निर्माण 12 वीं सदी के प्रारंभ में हुआ था। उसके पश्चात इटखोरी का न तो सर्वेक्षण किया गया है और न ही पुरातत्व के धरोहरों के अनुरक्षण की

समुचित-व्यवस्था ही की गई है।

श्री रामवृक्ष महतो, चतरा के उपायुक्त ने इटखोरी स्थित भदुली मंदिर-प्रांगण के विकास के लिए सराहनीय कार्य किया है। अभी इस क्षेत्र के लिए अन्य अनेक विकास योजनाओं को कार्यान्वित करने की आवश्यकता है। यहाँ एक अतिथि-गृह की नितांत आवश्यकता है। सुलभ-शौचालय, यात्री-निवास, विवाह के लिए भवनों के निर्माण होने से दूर-दूर से आने वाले यात्रियों के लिए सुविधा-जनक होगा।

इटखोरी जैन धर्मावलंबियों के लिए भी एक तीर्थ-क्षेत्र है। भदुली संभवतः श्री शीतलनाथ जी का जन्म-स्थान है। यहाँ से एक ताम्र-पत्र मिला था, जिसमें शीतल नाथ लिखा था। यहाँ उनका पद चिह्न भी मिला है। उसके नीचे एक शिलालेख भी मिला है। इसे अभी तक पढ़ा नहीं गया है।

पद्म पुराण के तीसवें सर्ग में कहा गया है कि प्लक्षो वृद्धरथो राजा, भद्रिका शीतलो जिः। “सुनंदा प्रथमाषाढा, संतु ते मंगलम् परम्।”

अर्थात् भद्रिकापुरी, वृद्धरथ पिता, सुनंदा माता, पूर्वाषाढा नक्षत्र, प्लक्षवृक्ष और शीतलनाथ जिनेंद्र—ये तेरे लिए मंगलमय हों। ऐसा प्रतीत होता है कि “भदुली” प्राचीन भद्रिकापुर ही है। यहीं “शीतलनाथ जिनेन्द्र” का जन्म हुआ था। कलकत्ता के राणा नारायण पाल द्वारा प्रकाशित “जैन तीर्थमाला अमोलका” रत्न में भदलपुर का मान-चित्र प्रकाशित किया गया है। उसे देख कर भदुली के प्राचीन-नगर के अवशेष का पता लगाया जा सकता है।

भारत-वर्ष के सभी प्राचीन-नगर नदियों के

किनारे बसे थे । जहाँ दो नदियों का संगम हो, उसके बाद नदी अर्द्ध चंद्राकार होती हो, उसके किनारे बसे नगर की सुन्दरता बढ़ जाती है । भदुली इसी प्रकार का नगर रहा है । महाने एवं बक्शा इन दो पहाड़ी नदियों के संगम के बाद नदी अर्द्ध चन्द्राकार हो जाती है । इसके किनारे बसे नगर की सुन्दरता एवं अच्छाइयों का कुछ कहना ही नहीं है ।

भदुली से लगभग 15 किलो-मीटर पश्चिम की ओर बढ़कर महानेनदी तमासीन का जलप्रपात बनाती है। यहाँ अवस्थित प्राचीन-गुफा दो पहाड़ों के बीच सरकती हुई नदी, जल प्रपात एवं उसकी संगमरमरी दुग्धोज्वल घबलता यहाँ आगंतुकों को परितृप्त करती है।

यहाँ मंदिर-प्रांगण में हमें एक विशाल शिवलिंग मिलता है, जिसका घेरा 80 इंच तथा ऊँचाई 36 इंच है। इस पर 117 पंक्तियों में 1008 छोटे-छोटे शिव-लिंग उत्कीर्ण हैं । इस मंदिर का प्राचीन तोरण-द्वार धराशायी हो गया है । यहाँ से हमें वास्तुकला के अद्भुत अवशेष मिले हैं । यहाँ की दीवारों पर उत्कीर्ण कलाकृतियाँ एलारा एवं बाघ की कला-कृतियों से भी परिष्कृत प्रतीत होती हैं । यहाँ से प्राप्त भित्तिचित्रों में, गरुड़ पर सवार विष्णु, भारत-नाट्यम् की मुद्रा में नृत्यांगना तथा अन्य अनेक भित्तिचित्र यहाँ के संग्रहालय में रखे गए हैं।

यहाँ एक भव्य यज्ञशाला भी है, जिसमें 15 मार्च 83 को सहस्र-चण्डी यज्ञ हुआ था । देश के

कोने-कोने से वेदज्ञ एवं श्रद्धालु भक्तों का यहाँ आगमन हुआ था । पुरी एवं काशी पीठ-स्थित जगद्गुरु शंकराचार्य भी इसमें सम्मिलित हुए थे । इस दिनों तक यह कार्यक्रम चला था ।

23 अप्रिल, 1984 को यहाँ भारतीय संस्कृति, के अग्रदूत एवं भूतपूर्व केंद्रीय मंत्री तथा जम्मू एवं कश्मीर के सदरे-रियासत डा० कर्ण सिंह जी का भी शुभागमन हुआ था । उन्होंने यहाँ "मानव जीवन में धर्म का महत्त्व" विषय पर अपना आख्यान दिया था । श्री शंकर दयाल सिंह सांसद एवं हिंदी के मूर्धन्य पत्रकार, साहित्यकार तथा श्री जितेन्द्र सिंह, पत्रकार तथा निदेशक, डा० सच्चिदानंद सिंहा, पत्रकारिता संस्थान, पटना भी यहाँ आए थे ।

भाव-प्रवण श्रद्धालुओं को इस अंचल में कहीं वेद-दृष्टा ऋषियों की पगध्वनि सुनाई पड़ती है तो कहीं आत्म-कल्याणेच्छु साधकों के जिज्ञासा-स्वर मुखरित होते हैं ।

यहाँ अवस्थित-मूर्तियों के अवलोकन से पता चलता है कि यहां विभिन्न प्रकार के उपासकों ने अपनी मान्यताओं के अनुसार उपासनाएँ की हैं । इनमें एक ओर हैं जैन और बौद्ध मतावलम्बी, तो दूसरी ओर वैष्णव, शाक्त, शैव, सौर्य तथा गाणपत्य मतानुयायी थी । ऐसा प्रतीत होता है कि अनुसंधानकर्त्ताओं के लिए अभी इसके अनेक पटल अनावृत्त होने शेष हैं ।

प्रियवाक्यप्रदानेन सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः ॥
तस्मात्तदेव वक्तव्यं वचने किम् दरिद्रता ॥

अर्थात्

संसार के समस्त जीव मधुर वचन से संतुष्ट होते हैं । अतः मधुर वचन बोलना चाहिए । बोली में दरिद्रता यानी कमी नहीं करनी चाहिए अर्थात् उदारतापूर्वक शब्दों का प्रयोग करना चाहिए ।



राष्ट्र-निर्माण में हिन्दी

—श्री नरेन्द्र कुमार सिंह 'नाहर',
एम. ए., एल. एल. बी.,
वरिष्ठ लेखाकार, हिन्दी कक्ष ।

हमारी हिन्दी अत्यन्त समृद्ध है । इसका भंडार विपुल है, इसकी परम्पराएँ अति प्राचीन हैं । विभिन्न युगों और परिस्थितियों के आँचल से प्रवाहित इसकी जीवन-धारा अत्यन्त जीवंत और गतिशील है । आदिकाल से लेकर आज तक इसमें संस्कृति के देदीप्यमान स्वर लहराते आए, समय के अनुरूप समस्याओं का समाधान प्राप्त होता रहा तथा भविष्य के लिए मंगल प्रेरणा मिलती रही । स्वर्णिम अतीत, साधना में समर्थ वर्तमान और स्वस्थ, सुन्दर, संयत लालसा से दीप्त भविष्य हिन्दी साहित्य की वर्तमान धरोहर हैं । यहाँ एक से एक कलाकार हुए हैं । धार्मिक मदान्धता पर क्रूर-कर्कश प्रहार करनेवाले कबीर, सांस्कृतिक समन्वय के पुरोहित तुलसी, प्रेम, सौन्दर्य एवं माधुर्य के कोमल गीतकार सूर इत्यादि सभी हमारे हिन्दी साहित्य की स्वर्णिम परम्परा के आधार स्तम्भ हैं । राष्ट्रीय चेतना का बिगुल फूँकने वाले भारतेन्दु के युग से हिन्द गद्य-साहित्य का विकास हुआ । तब से अनेक लेखकों ने अपनी प्रतिभा और साधना से हिन्दी के अतीत की परम्परा को विकसित किया, उसके नूतन विचारों की अभ्यर्थना की, उसके नवनिर्माण की साहित्यिक मान्यताओं को वाणी दी ।

कहते हैं, साहित्य में लोक-कल्याण की भावना निहित होती है—‘संहितस्य भावम् साहित्यम्’। इस अर्थ में वह किसी व्यक्ति की संकीर्ण भावना का उद्घाटन नहीं अपितु सामाजिक चेतना का उद्घोष होता है और होता है राष्ट्रीय संस्कृति के दिव्य स्वरों का सबल राग। इसी सोपान पर चढ़कर वह विश्व-कल्याण की कामना से अनुरंजित हो उठता है । पर कल्याण-साधना के प्रारम्भिक चरण में वह समाज और राष्ट्र का विप्लव-राग होता है । कुरीतियों की छाती पर पौरुष का पद-प्रहार, कुण्ठा और अंधविश्वासों के जमे हुए पत्थर को तीव्र वेग से तोड़ सकने की साधना और राष्ट्रीय संस्कृति के उन्नयन हेतु पौरुष के स्वरों का निनाद साहित्य की सहज वृत्ति होती है । सच पूछिए तो राष्ट्र की शृंखला को मजबूती और सौन्दर्य प्रदान करने का श्रेय साहित्य को है । इसके अभाव में राष्ट्र का विकास असम्भव है। उसमें न तो वैचारिक क्षितिज की व्यापकता आ सकती है और न विकास के लिए प्रेरणा और गति ही प्राप्त हो सकती है । तभी तो किसी कवि ने कहा है—

“अन्धकार है वहाँ जहाँ आदित्य नहीं,

मुर्दा है वह देश जहाँ साहित्य नहीं ।”

हिन्दी ने राष्ट्र के निर्माण, विकास और कल्याण में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है । सदियों की दासता के बन्धन को तोड़ने के लिए हिन्दी के साहित्यकारों ने क्या नहीं किया ? जब 1857 का सिपाही विद्रोह नृशंस अत्याचार और आपसी फूट के चलते निष्प्राण और विफल हो गया तब से लेकर स्वतंत्रता-प्राप्ति तक हिन्दी के लेखकों ने विदेशियों के खेलाफ देश के कोने-कोने में अलख जगाने की भरपूर चेष्टा की । भारतेन्दु की कविताओं ने देश की दुर्दशा का करुण, सच्चा चित्र उपस्थित किया, हमें हमारे बन्धनों से परिचित कराया तथा सुषुप्त देश को झकझोर कर जगाया । “आबहुँ सब मिली के रोबहुँ भारत भाई, हा ! हा ! भारत दुर्दशा न देखि जाई”— का सामूहिक उद्बोधन भारतेन्दु ने भरा । समकालीन कवियों ने भी अपनी सामर्थ्य भर उस स्वर को और व्यापक और प्रचण्ड बनाया । क्रान्ति की चिनगारियाँ यत्र-तत्र फूटने लगीं । राष्ट्रीय चेतना की किरणें चतुर्दिक फैलने लगीं । उस गतिशील परम्परा में श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, मैथिली शरण गुप्त, बाल कृष्ण शर्मा, माखनलाल चतुर्वेदी, रामधारी सिंह ‘दिनकर’ प्रभृति कवि आए । उनकी कविताओं में क्रान्ति की मशाल थी, विद्रोह की लाल लपटें थी, जनता को जगाने का परूष उद्बोधन-राग था । फलतः जागरण का प्रभात फूटने लगा, दासता की काली रात का अन्धकार दूर होने लगा । इस प्रकार देश

को जगाने में, उसे राष्ट्रीय साधना की सीख देने में तथा संघर्ष हेतु उसे तत्पर बनाने में हिन्दी का वस्तुतः अभूतपूर्व योगदान रहा है ।

यह कहना कोई अत्युक्ति नहीं होगी कि हिन्दी की राष्ट्र निर्माण में एक सुदीर्घ परम्परा रही है । इसमें सर्वेभ्य एवं समन्वय की धारा अनवरत प्रवाहित होती रही है । यह विदेशी आक्रमण और विदेशी शासन-काल में भी प्रेम और समन्वय के पथ पर ही आगे बढ़ती गई । तुलसी का ‘रामचरित मानस’ समन्वय की साधना का महाकाव्य है । वह हमारी सांस्कृतिक परम्परा की एक सफल सामाजिक शृंखला है । भारतीय दर्शन और ज्ञान के प्रमुख अध्याय यहाँ मिलेंगे । भव्य परम्परा से दिव्य बनी हुई यह पुस्तक पवित्र साधना, सामाजिक आदर्श और सफल विश्वासों की पुस्तक है । जीवन की विराट चेतना की झाँकी यहाँ मिलती है । भावों का गहरा उच्छ्वास यहाँ मिलता है और ये सभी हमारी संघर्षपूर्ण धरती के जाने-पहचाने स्वर हैं । इसमें कल्पना की ऐयाशी नहीं, सत्य का चेहरा है । तुलसी का युग विदेशियों के अनाचार का युग था । यवन आक्रमणकारी अब हमारे बादशाह बन गए थे । हमारी संस्कृति और सभ्यता के परूष स्वर उनके क्रूर-कट्टर मतवाद और अनय के सम्मुख नत हो गए थे । जातीय जीवन विषाक्त हो उठा था । हिन्दू और मुसलमान आपसी मतभेद और वैमनस्य में बुरी तरह जल रहे थे । एक ओर धार्मिक अन्धविश्वासों की भीड़, दूसरी ओर जीर्ण-शीर्ण रूढ़ियों में बँधा हुआ जन-जीवन । निराशा के

कुहर जाल में भारतीयों के विश्वास, स्वप्न और साधन व्रत सभी विलीन हो चुके थे। ऐसे ही समय में तुलसी ने 'रामचरित मानस' की रचना कर हतप्रभ मानवता को कर्तव्य का सन्देश दिया; कातरता और क्षुब्ध कुण्ठा को आशा और विश्वास का आलोक सौंपा और अन्याय के खिलाफ खड़ा होने की अभूतपूर्व क्षमता दी। अतः हिन्दी साहित्य का यह अमर महाकाव्य विश्व साहित्य में भी अपना अक्षुण्ण महत्त्व रखता है।

आधुनिक युग में इस धारा को जहाँ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने नया मोड़ दिया, वहाँ रत्नाकर और हरिऔध, मैथिली शरण गुप्त और जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला और सुमित्रा नन्दन पन्त, महादेवी वर्मा तथा रामधारी सिंह 'दिनकर' एवं प्रेमचन्द्र, जैनेन्द्र, अज्ञेय और यशपाल जैसे साहित्यकारों ने भी समस्त मनन, चिन्तन एवं हृदय-मंथन के अनन्तर नए युग के अनुरूप नई चेतना का स्वागत हिन्दी के माध्यम से किया। इनका सन्देश भौतिकता से मुक्ति और भय-संशय-जर्जर विश्व के लिए आशा का पीयूष था। रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द सरस्वती, महात्मा गाँधी जैसे युग द्रष्टा से हिन्दी सदैव प्रभावित होती रही है। हिन्दी की

इसी प्रभावशीलता को लक्ष्य करते हुए द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए मारिशस के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री शिवसागर रामगुलाम ने कहा था—“मारिशस में हिन्दी का विकास हमारे समाज के इतिहास का दस्तावेज है। हमारे पूर्वज खाली हाथ आये। उनके पास लड़ने के लिए कोई हथियार नहीं था। उन्होंने बहुत दुःख उठाया। जानवरों की तरह रात-दिन खेतों में काम किया, दुःख झेला पर अपनी आत्मा को हमेशा ऊँचा रखा। इसका कारण था कि उनके पास अपनी भाषा हिन्दी थी।”

इस प्रकार हम देखते हैं कि राष्ट्र निर्माण में, राष्ट्रीय प्रेम, समन्वय और एकता के संधान में प्रारम्भ से ही हिन्दी प्रयत्नशील और गतिशील रही है। सबों ने अधिकांश हिन्दी का ही प्रयोग किया, क्योंकि यह भारत के बहुत बड़े भू-भाग की भाषा थी, है और रहेगी। सभी काल के कवियों ने हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख और ईसाई के बीच सकता उ। समन्वय का अमर सन्देश दिया। उनका चाहे कटु आलोचना का सहारा लेना हो, चाहे प्रेम की भाषा का, उद्देश्य एक ही था और है— धर्म, समाज और विश्व में घुस आई कुरीतियों का खात्मा तथा समन्वयकारी तत्वों की प्रतिस्थापना।

जय हिन्द ! जय हिन्दी !

मेरा आग्रहपूर्वक कथन है कि अपनी सारी मानसिक शक्ति हिन्दी भाषा के अध्ययन में लगायें। हम यही समझें कि हमारे प्रथम धर्मों में से एक धर्म यह भी है।

—विनोबा भावे



मिथिला और भारतीय संस्कृति

—श्री वनवीर सिंह,
अनुभाग अधिकारी

घनश्याम सिन्धु की उन पंक्तियों को पढ़ते ही मन में यह भाव आता है कि यदि ग्रामित मिथिला तथा उसकी संस्कृति के बारे में कुछ दर्शाया जाय:-

“हा मिथिला । हा मैथिली ।
पद दलित, उपेक्षित भुलुंठित ।
सीता सुकुमारिक ई धरती,
हाय दुखित, अछि हाय व्यथित ॥
योगी जनकक ओ योग कतऽ ?
अछि कतऽ लक्ष्मीक अमृत वाणी ?
औ गेलहुँ कतऽ विद्यापति कवि ?
मडल सदृश उद्भट ज्ञानी ? ॥2॥
ई दारुण दशा किए अछि औ,
जे कतेक रास पुत्रक माता ।
ओ बेड़ी सँ जकड़ल पकड़ल,
आशा लगा हेरयि त्राता ॥3॥

मिथिला ने भारतीय संस्कृति को पूर्ण और व्यापक बनाने की जो महती साधना की है वह विशेष रूप से उल्लेख योग्य हैं । वैदिक काल से ही मिथिला प्राचीन विद्या के केंद्र के रूप में प्रख्यात थी । यहाँ उच्च श्रेणी की तो बात ही क्या निम्न श्रेणी के लोग भी ज्ञान की विभूति से वंचित नहीं थे । महाभारत में वर्णित धर्म व्याध कथा इस बात का प्रमाण है ।

भारतीय दर्शनों में चार दर्शन शास्त्रों का उद्गम स्थल मिथिला ही है । मिथिला की विभूतियों में गार्गी, मैत्रेयी, याज्ञवल्क्य, गौतम, कपिल, कणाद, उदयन, मंडन, भारती, प्रभाकर, उदयनाचार्य पक्षधर और गंगेश आदि यशस्वी विद्वान हो गये हैं । कहते हैं कि जैमिनी ऋषि ने मिथिला में ही पूर्व-मीमांसा शास्त्र की रचना की थी और बौद्धों के आक्षेप को दूर कर वेदों के महत्त्व पर प्रकाश डाला था । शंकर, कुमारिल पक्षधर, मुरारी शालिकनाथ, पार्थसारथि आदि प्रसिद्ध मीमांसक मिथिला के थे । इतना ही नहीं मिथिला में ज्योतिष, धर्मशास्त्र, व्याकरण शास्त्र आदि की भी रचना अत्यन्त प्राचीन काल से ही होती आ रही है । मिथिला की शास्त्रार्थ परिपाटी विश्व विश्रुत हैं । मिथिला में स्मरण मात्र से राजा जनक, हरि सिंह और शिवसिंह के स्थान दार्शनिक, याज्ञवल्क्य, कुमारिल, मण्डन, वाचस्पति, उदयन, गंगेश चण्डेश्वर और वर्धमान के समान मनीषी तथा विद्यापति के समान कवि हमारे मानस नेत्रों में सम्मुख उपस्थापित हो जाते हैं । यह मिथिला ही थी जहाँ वेद की यजुर्वेद संहिता की रचना हुई ; जिसमें प्रख्यात ईशावास्योपनिषद अन्तर्मुक्त है तथा वेदान्त दर्शन की नींव है । भारत का प्रत्येक अधिवासी विदेशियों के सम्मुख आदरपूर्वक वेदान्त का उल्लेख करता है, किन्तु उसे कहाँ तक ज्ञात है कि वेदान्त का उद्भव और विकास इसी मिथिला में वृहदारण्यक में याज्ञवल्क्य के द्वारा ईशावास्योपनिषद के

प्रणमन से हुआ। भारतीय पद दर्शनों में पूर्व मीमांसा, उत्तर मीमांसा (वेदान्त) न्याय, वैशेषिक और सांख्य का उदगम स्थल यही है। योग और तन्त्र साधना के क्षेत्र में भी मिथिला का अवदान चिरस्मरणीय रहेगा। वेदान्तेतर दर्शन में जैनधर्म के प्रवर्तक तीर्थंकर महावीर का जन्म भी यहीं वैशाली में हुआ था। गौतम बुद्ध ने यहाँ कई वर्ष बिताये और उनके अनेक शिष्य भी यहाँ हुए। मिथिला के दर्शन से आकृष्ट होकर भारत के सभी भागों से लोग यहाँ उपस्थित होते रहें हैं साथ ही यहाँ के आकर्षण का कारण यहीं का संगीत भी है जो आज भी मिथिला के गाँवों में जीवित है। यहाँ का संगीत नृत्य तथा नाटक समग्र भारत में प्रख्यात है। सम्पूर्ण मिथिला में निरन्तर विद्या दान के लिए टोल, पाठशाला, एवं चौपाड़ी आदि की व्यवस्था थी इसी से मिथिला की सांस्कृतिक धारा काल में क्रूर आघातों का तिरस्कार करती हुई आज भी जीवित और गतिशील रूप में प्रवहमान है। मैथिली संस्कृति की परम्परानुगत धारा को अक्षुण्ण रखने वाला एक और साधन है वहाँ के लोक गीत। लोक गीतों में मिथिला की समग्र सांस्कृतिक चेतना का सुस्पष्ट और सजीव चित्र विद्यमान है।

मिथिला में मधुबनी की चित्रकला भी विश्व प्रसिद्ध रही है। सर्वप्रथम इसे सीता देवी तथा जगदम्बा देवी ने जग प्रसिद्ध किया। महासुन्दरी देवी, गंगा देवी, हीरा देवी, यमुना देवी इत्यादि तो पद्मश्री से भी सम्मानित हैं हॉलाकि इनमें से कई आर्थिक संकट से गुजर रही है। सुरसण्ड, सीतामढ़ी से भी दो स्त्रियाँ जगप्रसिद्ध हुई हैं जो कि (सिक्की) कला के लिए जानी जाती हैं श्रीमती शैल देवी तथा कुमुदनी देवी।

अनन्त काल से ही मिथिलांचल प्रेम और सद्भावना की भूमि रही है। भूमिजा सीता मिथिला की बेटी थी जिन्हें अर्द्धांगिनी के रूप में पाकर मर्यादा पुरुषोत्तम राम

भी धन्य हुए। अनेकानेक कष्टों को सहते हुए भी सीता कभी भी अपने कर्तव्य से विचलित नहीं हुई तथा अग्नि-परीक्षा में भी शुद्ध स्वर्ण के समान जगमगाती रहीं। मिथिला की स्त्रियाँ सरल, सहज तथा कोमल हृदया होती हैं। हिन्दू और मुस्लिम परिवारों की स्त्रियों में भी अद्भुत भाव साम्य है, यहाँ तक कि हर पर्व-त्योहार, व्रत-अनुष्ठान तथा मंगल कार्यों के अवसरों पर उनके मधुर कंठों से गीत फूट पड़ते हैं और वातावरण गुंजायमान हो उठता है।

विगत कुछ वर्षों से पारस्परिक घात-प्रतिघात ने लोगों को अत्यन्त ही विचलित कर दिया है। कट्टरपन के कारण देश में अराजकता तथा दुर्व्यवस्था फैलती जा रही है। हिन्दू-मुस्लिम अलगाव, ऊँची, पिछड़ी जाति अलगाव का वातावरण बनता जा रहा है। कुछ वर्ष पूर्व इस देश में सब कुछ सामान्य था। हिन्दू-मुस्लिम भाई-भाई थे, ऊँची-पिछड़ी जाति में मेल था, परन्तु अब तो अलगाववादी शक्तियाँ जोड़ों पर हैं। लगता है कि ये हमारी पूरी संस्कृति का ही विनाश करके दम लेगी।

वर्तमान काल में भी मिथिला ने अनेकानेक विद्वान दिये। डाक्टर अमरनाथ झा जिनके बारे में कहा जाता है कि जब वे लंदन गए और उन्हें शेक्सपियर के बारे में बोलने के लिए कहा गया तो वे बोले "शेक्सपियर से मुझे इतना लगाव है कि अगर दुर्भाग्यवश उनके सभी ग्रन्थ जल जायें तो मैं उन्हें पुनः स्मरण से लिख डालूँगा।" लक्ष्मी कान्त झा जो कि अधिवक्ता के रूप में इतने ख्याति प्राप्त थे कि उन्हें पटना हाईकोर्ट का मुख्य न्यायाधीश सीधे बनाया गया। इनके पुत्र एस. के. झा ने भी बहुत नाम कमाया। लक्ष्मी कान्त झा तथा चन्द्रशेखर झा ने भारतीय विदेश सेवा में ख्याति प्राप्त की।

मिथिला की संस्कृति की एक धरोहर वहाँ का व्यंजन

भी है। पता नहीं, यहाँ की तरह कढ़ी, अदौरी, तिलौरी, कुम्हरी, सगौरी पूआ, बचका, पकवान, पिड़किया इत्यादि बनता है कि नहीं। "पाहुन" यानी कि मेहमान के स्वागत में अनेकानेक व्यंजन संभ्रान्त से लेकर गरीब परिवार में भी बनाया जाता है। अतिथि को भगवान स्वरूप माना जाता है। और यह विशेष ध्यान रखा जाता है कि उन्हें किसी तरह का कष्ट नहीं हो। "पाहुन" के आने पर पूरे समाज का भी दायित्व बनता है कि उन्हें खुश रखा जाय। दुल्हा या जामाता का तो मिथिला में इतना स्वागत किया जाता है कि शायद ही जग में कहीं भी ऐसी स्वागत किया जाता होगा। दुल्हाजी के ससुराल आने पर उनके साथ सलियाँ हर मिनट लगी रहती हैं और मिथिला का हँसी-ठिठोला भी जगप्रसिद्ध है। महिलायें भी अनेक तरह के गीत गाती हैं। मिथिला में पूजा एवं व्रत का भी बहुत महत्त्व है। अनन्तपूजा, गोधन, छठि, नगनिधी, वरसाईत, भरदुतिया, मधुश्रावणी, सामा-चकेबा, घड़ही इत्यादि यहाँ के विशेष पर्व हैं। होली-दशहरा, दुर्गा पूजा, ईद बकरीद इत्यादि भी बड़े ही हर्षोल्लास से मनाये जाते हैं।

मिथिलांचल में जगप्रसिद्ध कुशेश्वर, सिद्धेश्वर तथा चण्डी तारा एवं कनायल स्थान भी हैं जहाँ हजारों-हजार की संख्या में पर्व त्यौहार में लोग पूजा अर्चना के लिए जुटते हैं।

गंडक, बागमती, कमला, बलान, कोशी, गंगा से बाढ़ प्रभावित क्षेत्र होते हुए भी यह क्षेत्र अपनी संस्कृति को बचाये हुए है।

राँची कॉलेज में प्रो० दामोदर ठाकुर प्रिन्सपल थे और पारिवारिक संबंधों के कारण मैं वहाँ उनके यहाँ जाया-आया करता था "कैम्प" से पढ़े हुए यह विद्वान मुझसे कभी भी हिन्दी में बात नहीं करते थे सदा ही मैथिली का ही प्रयोग करते थे। उनके घर में आगे भी अंग्रेजी के विद्वान हुए लेकिन घर में पूरी मिथिला की ही संस्कृति कायम थी। होली में जो मजेदार मालपूआ उनके यहाँ बनता था शायद मुझे कहीं भी फिर न नसीब हुआ।

मिथिला ! तुम्हारी संस्कृति को नमन करते हुए आशा करता हूँ कि यह और फूले और पनपे तथा जीवित रह कर जग को उजागर करे।

हिन्दी उन सभी गुणों से अलंकृत है, जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में समासीन हो सकती है।

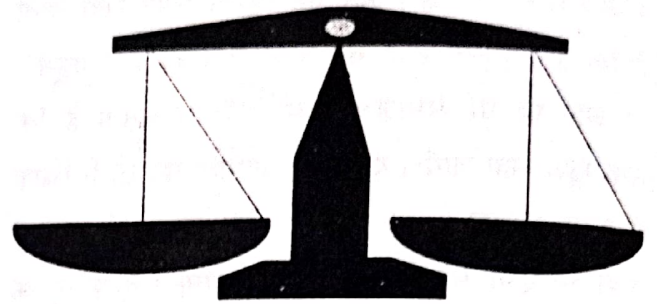
—मैथिलीशरण गुप्त

भाषा और साहित्य की जागृति राष्ट्रीय उन्नति के मार्ग की पहली मंजिल है।

—पुरूषोत्तम दास टंडन

“लोहा”

-श्री नरेन्द्र कुमार,
ग्रुप 'घ'



आप लोहे की कार का आनंद लेते हो
मेरे पास लोहे की बंदूक है ।

मैंने लोहा खाया है,
आप लोहे की बात करते हो ।

लोहा जब पिघलता है तो भाप नहीं
निकलती

जब कुटाली उठानेवालों के दिल से भाप
निकलती है,

तो लोहा पिघल जाता है ।

पिघले हुए लोहे को किसी भी आकार
में ढाला जा सकता है ।

कुटाली में देश की तकदीर ढली
होती है

यह मेरी बंदूक

आपके बैंकों के सेफ

और पहाड़ों की उलटानेवाली मशीनें,
सब लोहे के हैं ।

शहर से वीराने तक हर फर्क

मालिक से मुलाजिम तक हर रिश्ता

बिल से कानून तक हर सफर
शोषणतंत्र से इन्कलाब तक हर इतिहास
जंगल, कोठरियों व झोपड़ियों से लेकर
इंटैरोगेशन तक

हर मुकाय सब लोहे के हैं।

लोहे ने बड़ी देर इंतजार किया है

कि लोहे पर निर्भर लोग

लोहे की पत्तियाँ खाकर

खुदकुशी करना छोड़ दें

लेकिन आखिर लोहे को

पिस्तौलों, बंदूकों और बमों की

शकल लेनी पड़ी

आप लोहे की चमक में चुधियाँ

सकते हैं,

लेकिन मैं लोहे की आँख से

दोस्तों के मुखौटे पहने दुश्मन भी

पहचान सकता हूँ,

क्योंकि मैंने लोहा खाया है और

आप लोहे की बात करते हैं ।

राजभाषा नीति के कार्यान्वयन हेतु वर्ष 1998-99 के वार्षिक कार्यक्रम से उद्धृत

“क” “ख” तथा “ग” क्षेत्रों के लिए निर्धारित जांच बिन्दुओं का विवरण

परिशिष्ट

1. फार्मों, कोडों, मैनुअलों और गजट की सामग्री का द्विभाषी प्रकाशन

शहरी विकास मंत्रालय के अधीन भारत सरकार के प्रेस इस बात का ध्यान रखते हैं कि (क) भारत के गजट में छपने वाली अधिसूचनाएँ नियम संकल्प तथा (ख) कोड मैनुअल, फार्म तथा रजिस्ट्रों में शीर्ष आदि हिंदी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में हो। जो सामग्री दोनों भाषाओं में नहीं भेजी जाती उसी मुद्रण निदेशालय संबंधित विभाग को वापस कर देता है। इस प्रकार के जांच बिन्दु भारत सरकार के अन्य मंत्रालयों के अधीन स्थापित प्रेसों में भी बनाए जाने चाहिए जिससे ऐसी सामग्री केवल अंग्रेजी में न छपे।

2. देवनागरी टाइपराइटर्स की खरीद

पूर्ति और निपटान निदेशालय अपने यहाँ टाइपराइटर्स की खरीद संबंधी प्राप्त होने वाली इंडेंटों की जांच करके यह देखें कि क्या आदेशों का पालन हो रहा है। जो विभाग, कार्यालय या उपक्रम अपने टाइपराइटर्स की खरीद पूर्ति तथा निपटान निदेशालय के मार्फत न करके सीधे ही करता है उन्हें भी इस प्रकार के जांच बिन्दु बना लेने चाहिए। उनका जो अधिकारी टाइपराइटर खरीदने के लिए आर्डर देता है उसे यह भी देख लेना चाहिए कि क्या आदेशों का पालन हो रहा है।

(का० ज्ञा० सं० 12015/18/90-रा० मा० (तक०) दिनांक 25.5.90 और का० ज्ञा० सं० 12015/16/92 रा० भा० (तक०) दिनांक 22.6.92)

3. सामान्य आदेश तथा अन्य कागजों को अनिवार्य रूप से द्विभाषी रूप में जारी करना।

राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा 3 (3) में उल्लिखित सभी दस्तावेज आदि हिंदी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में जारी होने चाहिए। इसके लिए उस अनुभाग को जहाँ ऐसे दस्तावेज साइक्लोस्टाइल किए जाते हैं जांच बिन्दु बना दिया जाए और ऐसे दस्तावेज तभी साइक्लोस्टाइल किए जाए जब उनका हिंदी रूपान्तर भी साथ भेजा गया हो। साथ ही जो अनुभाग इन दस्तावेजों के प्रेषण का काम करता है वह यह सुनिश्चित करे कि सभी प्रकार के दस्तावेज साथ-साथ हिंदी में भी जारी हो रहे हैं। जारी करते समय यह ध्यान रखा जाए कि हिंदी रूपान्तर अंग्रेजी रूपान्तर के ऊपर पहले रहे।

(क०ज्ञा०सं० 12024/10/90 रा०भा० (ख-2) दिनांक 26.6.92 का० ज्ञा० सं० 12024/2/92 रा० भा० (ख-2) दिनांक 6.4.92 और का० ज्ञा० सं० 20034/53/92 रा० भा० (अ. वि.) दिनांक 17.7.92)

4. “क” तथा “ख” क्षेत्रों की राज्य सरकारों को भेजे जाने वाले पत्र आदि

प्रेषण अनुभाग को जांच बिन्दु बनाकर उनसे यह सुनिश्चित करने के लिए कहा जाए कि वे "क" तथा "ख" क्षेत्रों की राज्य सरकारों के जाने वाले पत्रों आदि को प्रेषण के लिए तभी स्वीकार करें जब ये हिंदी में हो या उनका हिंदी अनुवाद साथ हो।

5. लिफाफों पर हिंदी में पते लिखना

प्रेषण अनुभाग को जांच-बिन्दु बनाया जाए और यह सुनिश्चित किया जाए कि "क" तथा "ख" क्षेत्रों को जाने वाले पत्रों के लिफाफों पर पते देवनागरी लिपि में ही लिखे जाएं।

6. रबड़ की मोहरें, नाम पट्ट, साइनबोर्ड आदि द्विभाषी रूप में बनाना

सभी मंत्रालय / विभाग और देश-विदेश में स्थित उनके सभी संबद्ध / अधीनस्थ कार्यालय एवं "क" तथा "ख" क्षेत्रों में स्थित केन्द्रीय सरकार से अनुदान पाने वाले स्वैच्छिक संस्थानों में नामपट्ट रबड़ की मोहरे पत्र शीर्ष आदि द्विभाषी रूप में ही बनवाए जाएं और "ग" क्षेत्र में स्थित कार्यालयों में ये मर्दें त्रिभाषी रूप में तैयार करवाई जानी चाहिए। जो अनुभाग इन वस्तुओं को तैयार करने का काम देखते हैं उसके प्रभारी अधिकारी की जिम्मेदारी होनी चाहिए कि वह यह सुनिश्चित करे कि राजभाषा नियम 1976 के नियम 11 में उल्लिखित मर्दे हिंदी और अंग्रेजी में द्विभाषी रूप से और यथावश्यक क्षेत्रीय भाषा में भी तैयार कराई जाएं।

(का. ज्ञा. सं. 1/14034/1/87- रा. भा. (क-1) दिनांक 30.12.87 और का. ज्ञा. सं. 12024/2/92- रा. भा. (ख-2)-5 दिनांक 21.7.92)

7. सेवा पुस्तिकाओं / रजिस्ट्रों में प्रविष्टियां

"क" व "ख" क्षेत्रों में स्थित केन्द्रीय सरकार के

कार्यालयों में रखे जाने वाले रजिस्ट्रों / सेवा पुस्तिकाओं में प्रविष्टियां हिंदी में की जाएं। "ग" क्षेत्र में स्थित कार्यालयों में ऐसी प्रविष्टियां यथासंभव हिंदी में की जाएं।

8. हिंदी में प्राप्त पत्रों आदि के उत्तर हिंदी में देना

जिस अधिकारी के हस्ताक्षर से कोई पत्रादि जारी होता है स्वयं उसकी यह जिम्मेदारी होनी चाहिए कि यदि पत्रादि हिंदी में प्राप्त हुआ है तो उसका उत्तर हिंदी में दिया जाए।

9. सामान्य जिम्मेदारी

राजभाषा अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों के अनुसार जो पत्र, परिपत्र आदि हिंदी में या हिंदी और अंग्रेजी में जारी होने चाहिए या जो प्रलेख हिंदी तथा अंग्रेजी, दोनों भाषाओं में तैयार किए गए हों, ये उसी रूप में जारी होते हैं, यह देखने की जिम्मेदारी पत्र या प्रलेख पर हस्ताक्षर करने वाले अधिकारी की है। अतः हस्ताक्षर से पूर्व ऐसे अधिकारी को यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि ऐसे पत्र / परिपत्र प्रलेख आदि हिंदी में या द्विभाषी रूप से जारी किए जाएं।

10. अनुपालन के लिए प्रशासनिक प्रधान का उत्तरदायित्व

राजभाषा अधिनियम 1976 के प्रावधान के अनुसार सरकार के प्रशासनिक प्रधान का उत्तरदायित्व है कि वह यह सुनिश्चित करे कि राजभाषा अधिनियम और नियमों के उपबंधों और केन्द्रीय सरकार द्वारा इस बारे में जारी किए गए निदेशों का समुचित रूप से अनुपालन हो रहा है। उसकी यह भी जिम्मेदारी है कि वह इस प्रयोजन के लिए उपयुक्त और प्रभावकारी जांच के वास्ते उपाय करें।



हिन्दी पत्रिका चेतना के नवम् अंक के लोकार्पण समारोह का दीप जलाकर उद्घाटन करते हुए श्री नन्द लाल, महालेखाकार (लेखा परीक्षा) – I, बिहार, पटना ।



कार्यालयीय हिन्दी पत्रिका 'चेतना' के नवम् अंक के लोकार्पण समारोह में 'मुख्य अतिथि' के रूप में कार्यालय के अधिकारियों / कर्मचारियों को सम्बोधित करते हुए डॉ० राम वचन राय, अध्यक्ष, हिन्दी प्रगति समिति, राजभाषा विभाग, बिहार सरकार, पटना ।



दिनांक 1-9-1998 को दीप प्रज्ज्वलित कर हिन्दी पखवाड़ा समारोह का शुभारम्भ करते हुए श्री अरूण कुमार सिंह, महालेखाकार (ले० एवं ह०) - II, बिहार, पटना ।



कार्यालय के मनोरंजन क्लब के वार्षिक समारोह के उपलक्ष्य में पारितोषिक प्रदान करते हुए श्री एस० के० एफ० कुजूर, स्टाफ निदेशक ।